संरक्षक
डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र
-09412992244
डॉ. लक्ष्मीशंकर बाजपेयी
-09811174466
विश्वयात्री -डॉ. कामता कमलेश
-09412633194
शिव बाबू मिश्र
-09412750094

परामर्श
डॉ. श्यामसिंह 'शशि'
-09818202120
डॉ. धनंजय सिंह
-09810685549
डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक'
-07417619828
विनय सागर जायसवाल
–7520298865

तकनीकी सलाहकार
श्याम सिंह रावत
-9410517799

प्रधान संपादक
आशा शैली
-9456717150, 8958110859

संपादक
कुहेली भट्टाचार्य–09711250556

विधि-परामर्श
दुर्गा सिंह मेहता

मुख्य प्रबंधक
मंजु पाण्डे 'उदिता'–9536510501

प्रचार सचिव
पुष्पा जोशी–9536510501

विशेष सहयोगी
निर्मला सिंह–बरेली, -9412821608
दर्शन 'बेज़ार' (आगरा) –9760190692
प्रेमलता पंत (अल्मोड़ा)
सूरत भारती, (रामपुर बुशहर हि.प्र.) -09418272934
कृष्णचन्द्र महादेविया, (मण्डी हि.प्र.) –09857083213
डॉ. वेदप्रकाश प्रजापति 'अंकुर' (हल्द्वानी)-9412943042
स्नेहलता शर्मा –9450639976
सुषमा भण्डारी, (दिल्ली) -09810152263
सत्यपाल सिंह 'सजग' (लालकुआँ) -09412329561
निरुपमा अग्रवाल (बरेली) -9412463533
पंकज बत्रा (लालकुआँ) -9897142223

1.शैल-सूत्र में प्रकाशित रचनाओं के प्रति सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
2.लेखक अपने विचार प्रेषण के लिए स्वतन्त्र है।
3.शैल-सूत्र परिवार के सभी सदस्यों के पद अवैतनिक हैं।
4.प्रत्येक कानूनी विवाद का निपटारा पत्रिका के सम्पादकीय कार्यालय का विधि क्षेत्र होगा।

सम्पादकीय कार्यालय एवं
पत्र व्यवहार का पता–
कार रोड, बिन्दुखत्ता, पो–लालकुआँ,
जिला–नैनीताल (उत्तराखण्ड)
पिन–262402
मो–09456717150, 8958110859
Email-asha.shaili@gmail.com

मूल्य-एक प्रति 25/-,
वार्षिक 100/-,
आजीवन 1000/-,
संरक्षक सदस्य 2100/-

स्वामी, प्रकाशक तथा मुद्रक आशा शैली (कार रोड, लालकुआँ, जि. नैनीताल) ने एच.जे. इंटरप्राइजेज़, खानचन्द मार्केट, हल्द्वानी (नैनीताल) से मुद्रित कराया। सम्पादक कुहेली भट्टाचार्य (ए-123, सुन्दर अपार्टमेंट जी. एच. -10 नई दिल्ली-87)।

ऐमिली डिकिंसन की कविताओं का अनुवाद-आवरण का भीतरी पृष्ठ
अनुवादक डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक'

विधा	लेखक	पृष्ठ
आलेख-		
भारत के प्रथम आधुनिक वैज्ञानिक- जगदीश चन्द्रबसु-श्याम सिंह रावत **(धरोहर)**		05
समकालीन हिन्दी काव्य और सृजनात्मकता के मायने-रवीन्द्र प्रभात		35
आज विश्व में हिन्दी की स्थिति अच्छी है-डॉ. प्रभुलाल चौधरी		38
साहित्य में पत्रलेखन परम्परा-डॉ. कामता कमलेश		41
धारावाहिक उपन्यास-	डॉ सुधाकर अदीब	11
कहानी-	आँखें-बद्रीसिंह भाटिया	15
	टूटे घेरे-शमा ख़ान	46
लघुकथाएँ	अगवानी-राकेश चक्र	10
	कम्पनी-डॉ. करुणा पाण्डे	22
	फ्रोज़न वॉइस-सीताराम गुप्ता	31
साक्षात्कार-	सरोजनी प्रीतम से -शशि श्रीवास्तव	29
गीत- डॉ. नागेश पाण्डेय 'संजय', डॉ. ब्रजेश मिश्र		37
ग़ज़लें- अरुण शर्मा, महावीर उत्तरांचली, रणधीर सिंह गौड़ 'धीर', लक्ष्मी खन्ना 'सुमन',		14
विनीत जौहरी बदायूँनी, कमलेश भट्ट 'कमल', सीमा गुप्ता, हरि फैज़ाबादी		40

स्थाई स्तम्भ

काव्यधारा- डॉ. महेंद्र प्रताप पाण्डे 'नन्द'-23, आशुतोश गुप्त, रजनी शर्मा-24, मुरलीधर वैष्णव, संध्या सिंह-25, मंजू पाण्डे 'उदिता', किशोर कुमार खोरेंद्र-26, वीरेंद्र शर्मा, केवल कृष्ण ढल, मनोज कामदेव-27, **शिखा श्याम राणा, निरुपमा अग्रवाल-28,**

साहित्य समाचार	32
बालो द्यान-	
चिन्नी-डॉ सरोजनी कुलश्रेष्ठ (बाल कहानी)	44
भारत दर्शन--कलकत्ते का तूने.....डॉ. सेराज ख़ान बातिश	48
समीक्षा-समाज को दिशा देता उपन्यास -डॉ. सुशील कुमार-	50
उड़ते परिन्दे-विनय सागर	52

जीवन में किसी भी वस्तु के खो जाने से दुखी मत हो, क्योंकि जब पेड़ के पत्ते झरते हैं तो वह पुनः नए पत्तों से भर जाता है।

सफ़र कोई भी हो, किसी नगर–गाँव का, बस का, ट्रेन का, पैदल या फिर ज़िन्दगी का, सफ़र आखिर सफ़र है। उस्ताद शायर साहिल सहरी नैनीतालवी का प्रसिद्ध शेर है–

''मैं लौटने को कह के जा तो रहा हूँ लेकिन
सफ़र, सफ़र है, मेरा इंतज़ार मत करना।।

जी हाँ! ये साहित्य का सफ़र भी तो एक सफ़र ही है। जिस तरह सफ़र तय करते–करते बहुत से पर्वत–घाटियाँ लाँघना अनिवार्य हो जाता है, उसी तरह साहित्य के सफ़र के अपने ही पर्वत हैं और अपनी ही घाटियाँ जो मुझे भी लाँघने पड़े और ऐसे ही मेरे अन्य सहयात्रियों को भी लाँघने पड़ते हैं, जो इस मार्ग पर चलने लगते हैं। फिर भी हम जैसे लोग न तो थक कर बैठ सकते हैं और न ही किसी से हमें शिकवा–शिकायत हो सकती है क्योंकि यह तो सृष्टि का नियम ही है कि दिन तभी अच्छा लगता है जब रात साथ हो अन्यथा दिन का कोई औचित्य नहीं। यकीन मानिए, इसी तरह यदि आपके साथ सहयात्रियों की नाराज़गी नहीं चलती तो आपको सहमति का मूल्य भी मालूम नहीं हो सकता। अत: थकना कैसा और शिकायत कैसी? मार्ग का चयन तो हम लोगों ने स्वयं ही किया है।

संदर्भ आया तो बताती चलूँ, सूचना विभाग के निर्णय के अनुसार अब हमें पत्रिका अपनी तिमाही तिथि के हिसाब से मास की दो तारीख से पहले ही कार्यालय पहुँचानी होगी। उसके पश्चात् यदि हम पत्रिका विभाग को देते हैं तो यह रिकार्ड में नहीं आएगी। नियम सख़्त तो हैं परन्तु इसका हमें सीधा लाभ यह हुआ कि अब हमें पत्रिका समय पर देना अनिवार्य हो गया है। अत: हम और अधिक कर्मठ हो जाएँ तो ही हमारे और पत्रिका के भी हित में होगा। इससे हमारे नियमित पाठकों को भी थोड़ी राहत मिलेगी।

इस बार पत्रिका में कुछ परिवर्तन किए गए हैं। हमारे कुछ सहयोगी अपनी निजी व्यस्तता के कारण पत्रिका से अलग हो गए हैं तो कुछ कर्मठ सदस्य, जो प्रारम्भ से ही पत्रिका को सहयोग दे रहे हैं, उन्हें कुछ दायित्व सौंपे गए हैं। इसका कारण मात्र मेरी बढ़ती उम्र की थकान है। मैं चाहती हूँ कि आपकी पत्रिका शैलसूत्र मेरे बाद भी इसी प्रकार आपके संग–साथ रहे।

दिनभर बहुत से फोन और बहुत–से पत्र भी आते हैं, लोग नेट पर भी संदेश भेजते हैं, जिसमें कहा गया होता है कि पत्रिका उन्होंने यहाँ देखी–वहाँ देखी, उन्हें भी पत्रिका भेजी जाए। इससे 'कोई पुस्तकें नहीं पढ़ता' की भ्रान्ति दूर होती है। यदि कोई नहीं पढ़ता तो हमारा पता या फोन नंबर या मेल आईडी उनको कहाँ से मिल जाती है? मैं स्वयं भी बहुत सारी पत्रिकाओं की प्रतीक्षा करती हूँ। अधिक समय नहीं मिलता फिर भी जितना मिलता है पढ़ती ही हूँ। यह बात मुझे इसलिए कहनी पड़ रही है कि पुस्तकों और पत्रिकाओं के विषय में जो नकारात्मकता का वातावरण तैयार किया जा रहा है, वास्तव में वैसा है नहीं। हर चीज़ में एक सकारात्मक दृष्टिकोण हमें निरंतर ऊर्जा से परिपूर्ण करता है। बेहतर होगा कि सकारात्मकता को बनाए रखिए और शैलसूत्र के अगले पड़ाव की ओर बढ़ने की तैयारी कीजिए। धन्यवाद!

–आशा शैली

नगर पंचायत लालकुआँ

समस्त सम्मानित नगर वासियों को स्वतंत्रता दिवस की हार्दिक शुभ कामनाएँ

नगर पंचायत लालकुआँ शहर के समस्त सम्मानित नगर वासियों के सहयोग के लिए धन्यवाद करते हुए अपील करती है कि-

1. भवन कर आदि समय से भुगतान करें।
2. अपने व्यवसाय से सम्बंधित लाइसेंस नगर पंचायत से बनवाकर ही व्यवसाय करें।
3. यह नगर आपका है इस स्वच्छ बनाये रखने हेतु कूड़ा पृथक-पृथक कूड़ेदानों में डालें
4. पालीथीन की रोकथम हेतु कम से कम पालीथीन की वस्तुओं का उपयोग करें। साथ ही पालीथीन को एकत्र कर नगर पंचायत के पालीथीन स्टोर में जमा कराएँ।
5. 40 माईक्रोन से नीचे की प्लास्टिक कैरीबैग पर पूर्ण प्रतिबंध है।
6. अतिक्रमण को बढ़ावा न दें। नालियों के ऊपर व रोड की ओर कोई भी सामग्री न रखें।
7. पर्यावरण के संरक्षण हेतु अधिक से अधिक पेड़ लगाएँ औश्र नगर के विकास कार्यों में अपना सहयोग दें।
8. यह नगर आपका है, इसे आदर्श नगर बनाने में लिएआप अपना अमूल्य सहयोग दें। देश की एकता एवं अखण्डता को बनाए रखने में नगर पंचायत सदैव दृढ संकल्प है।

(श्रीमती प्रतिभा कोहली)
अधिशासी अधिकारी
नगर पंचायत लालकुआँ
जिला-नैनीताल

(राम बाबू मिश्रा)
अध्यक्ष
नगर पंचायत लालकुआँ
जिला-नैनीताल

श्री धनसिंह,

श्री लक्ष्मण सिंह खाती,

श्रीमती राधा,

श्रीमती रचना गिरी,

श्री राजकुमार सेतिया,

श्रीमती सुधा श्रीवास्तव,

संजय जोशी

श्री अनुज,

मुख़्तयार अहमद

नीमा पाण्डे

भारत के प्रथम आधुनिक वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बसु —श्यामसिंह रावत

प्रो. जगदीश चन्द्र बसु भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे

जिन्हें भौतिकी, जीवविज्ञान, वनस्पति विज्ञान तथा पुरातत्व के पहले वैज्ञानिक थे जिन्होंने रेडियो और सूक्ष्म तरंगों की प्रकाशिकी पर कार्य किया। उन्होंने ईस्वी सन 1900 में पेड़-पौधों में भी जीव-जंतुओं की तरह चेतना है, को प्रमाणित किया। इससे पहले दुनिया इस बात से अनभिज्ञ थी कि वनस्पतियाँ भी सजीव होती हैं। उन्होंने यह प्रमाणित किया कि कुछ अजैव तंत्रों में भी उद्दीपन के प्रति विद्युत अनुक्रियाएँ देखी जा सकती हैं। उनके निष्कर्षों ने बाद में शरीर-विज्ञान, जीव-विज्ञान, साइबरनेटिक्स चिकित्सा-शास्त्र और कृषि जैसे विषयों को प्रभावित किया। उन्हें भारत का पहला वैज्ञानिक शोधकर्ता और दुनिया भर में रेडियो विज्ञान का पिता माना जाता है। विज्ञान कथाएँ लिखने के कारण वे बांग्ला विज्ञान कथा-साहित्य के भी जनक माने जाते हैं। भारत में वैज्ञानिक पुनर्जागरण लाने में सर जगदीश चन्द्र बसु का योगदान अद्वितीय है।

बसु सेन्ट जैवियर महाविद्यालय कलकत्ता से स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद लंदन विश्वविद्यालय में चिकित्सा की शिक्षा लेने गये, लेकिन स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याओं के चलते इन्हें यह शिक्षा बीच में ही छोड़ कर भारत वापिस आना पड़ा। कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कॉलेज में भौतिकी के प्राध्यापक के पद पर जातिगत भेदभाव का सामना करते हुए भी इन्होंने बहुत से अतुलनीय वैज्ञानिक प्रयोग किये। असाधारण प्रतिभा के धनी डॉ. बसु ने बेतार के संकेत भेजने में उल्लेखनीय प्रगति की और रेडियो संदेशों को पकड़ने के लिए दुनिया में सर्व प्रथम अर्धचालकों का प्रयोग करना शुरू किया, लेकिन ये पेटेंट प्रक्रिया के बहुत विरुद्ध थे। इसीसे अपनी खोजों से व्यावसायिक लाभ उठाने की बजाय बसु ने इन्हें सार्वजनिक रूप से प्रकाशित कर दिया ताकि अन्य शोधकर्ता भी इन पर आगे काम कर सकें। इसके बाद इन्होंने वनस्पति व जीव विज्ञान में अनेक खोजें की। इन्होंने क्रेस्कोग्राफ यंत्र का

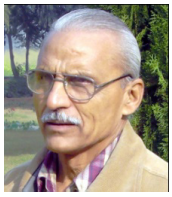

आविष्कार किया और इसके द्वारा विभिन्न उत्तेजकों के प्रति पौधों की प्रतिक्रिया का अध्ययन किया। इन्होंने सिद्ध किया कि वनस्पतियों और जीव-जंतुओं के ऊतकों में काफी समानता है।

जगदीश चन्द्र बसु का पुश्तैनी घर विक्रमपुर परगना में रशिवाल नामक गाँव (आजकल बांग्लादेश के मुंशीगंज जिले में) ढाका के निकट ही था परन्तु उनका जन्म 30 नवम्बर, 1858 को ढाका जिलान्तर्गत फरीदपुर के मेमनसिंह स्थित उनकी ननिहाल में हुआ था। यहीं पर बसु ने अपना बाल्यकाल बिताया। उनके पिता भगवान चन्द्र बसु ब्रह्म समाज के नेता और उप-मैजिस्ट्रेट या सहायक कमिश्नर थे। भगवान चन्द्र बसु चाहते थे कि उनका बेटा मातृभाषा में सीखे और अंग्रेजी सीखने से पहले अपनी संस्कृति को जाने। इसी कारण बालक जगदीश की प्रारंभिक शिक्षा उनके पिता द्वारा स्थापित एक बांग्ला भाषी पाठशाला में हुई। ग्यारह वर्ष की आयु तक इन्होंने उसी विद्यालय में शिक्षा ग्रहण की। जहाँ गरीब किसानों, मछुआरों और कामगारों के बच्चे पढ़ते थे। उनके संसर्ग से बालक बसु में प्रकृति के प्रति प्रेम जागृत हुआ। वे प्राय: गाँव के मेलों में जात्राओं (लोक नाटकों) में जाते थे जिनसे उन्हें महाभारत और रामायण जैसे महाकाव्य पढ़ने की प्रेरणा मिली। महाभारत में कर्ण का चरित्र उन्हें अत्यधिक प्रभावित करता था। वे प्राय: कुरुवंश के राजकुमारों के उस खेल के बारे में सोचते जब अर्जुन विजयी हुआ और तब ललकारे जाने पर चुनौती देने के लिए अजनबी के रूप में कर्ण सामने आया। नाम और जन्म के बारे में पूछने पर उसने उत्तर दिया, ''शक्तिशाली गंगा से कोई नहीं पूछता कि अपने बहुत से नालों में से वह किससे आती है? उसका अपना प्रवाह ही उसका औचित्य है। इसी प्रकार मेरा पराक्रम ही मेरे लिए सब कुछ होगा।'' बसु ने लिखा है, 'मेरे बचपन के नायक कर्ण की तरह मेरा जीवन भी सदा संघर्षपूर्ण रहा है और अंत तक रहेगा। आदमी के लिए यह उचित नहीं कि हालात की शिकायत करे, बल्कि

उसे उन्हें बहादुरी से स्वीकार करना चाहिए, उनका सामना करना चाहिए और उन पर शासन करना चाहिए।'

विक्रमपुर में 1915 में एक सम्मेलन को संबोधित करते हुए जगदीश चन्द्र बसु ने कहा-''मैं जिस बांग्ला विद्यालय में भेजा गया वहाँ पर मेरी दायीं तरफ मेरे पिता के मुस्लिम परिचारक का बेटा बैठा करता था और मेरी बाईं ओर एक मछुआरे का बेटा। ये ही मेरे खेल के साथी थे। उनकी पक्षियों, जानवरों और जलजीवों की कहानियों को मैं ध्यान से सुनता था। शायद इन्हीं कहानियों ने मेरे मस्तिष्क में प्रकृति की संरचना पर अनुसंधान करने की गहरी रुचि जगाई।''

1869 में उन्होंने कलकत्ता के सेंट जेवियर स्कूल में प्रवेश लिया। जहाँ वे कलकत्ता में आधुनिक विज्ञान की परम्परा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाले फादर इयूजीन लाफंट के संपर्क में आये और उनसे अत्यधिक प्रभावित हुए। 1879 में जगदीश चंद्र बसु ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से भौतिक विज्ञान में बीए. परीक्षा उत्तीर्ण की। उनकी जीव विज्ञान में बहुत रुचि थी, परन्तु उच्च शिक्षा के लिए उनके पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी और वे बीमार व ऋणग्रस्त भी थे। तब उनकी माता वनसुन्दरी देवी ने इंग्लैंड जाकर उनके चिकित्सा विज्ञान पढ़ने की व्यवस्था की। जिससे वे 22 वर्ष की आयु में लंदन चले गये। मगर स्वास्थ्य खराब रहने से उन्होंने चिकित्सक बनने का विचार त्याग दिया और कैम्ब्रिज के क्राइस्ट महाविद्यालय चले गये। वहाँ भौतिकी के एक प्रोफेसर ने बोस को भौतिक शास्त्र के अध्ययन के लिए प्रेरित किया। 1884 में बोस ने नैसर्गिक विज्ञान विषय में दूसरी श्रेणी में कला स्नातक और लंदन यूनिवर्सिटी से विज्ञान स्नातक की डिग्री भी प्राप्त की।

एक वर्ष बाद भारत लौट कर उन्होंने तत्कालीन निदेशक, लोक शिक्षा बंगाल एल्फ्रेड क्राफ्रट और प्रेसिडेंसी कॉलेज के प्रिंसिपल चार्ल्स आर. टॉनी के भारी विरोध पर भारत के तत्कालीन वॉइसराय लॉर्ड रिपन के हस्तक्षेप से प्रैसीडेंसी कॉलेज में भौतिक-विज्ञान के पहले भारतीय प्रोफेसर के रूप में अध्यापन प्रारंभ किया। यहाँ वे 1915 तक रहे। उस समय भारतीय शिक्षकों को अंग्रेज शिक्षकों की तुलना में एक तिहाई वेतन दिया जाता था। इसका जगदीश चंद्र बसु ने विरोध किया और बिना वेतन के तीन वर्षों तक अध्यापन करते रहे। अंततः चौथे वर्ष अध्यापन-कार्य में बसु की योग्यता के महत्व और उनके अच्छे व्यवहार को देखते हुए उन्हें नियुक्ति के दिन से ही स्थायी नियुक्ति के साथ-साथ पिछले तीन वर्षों का वेतन एकमुश्त दे दिया गया जिससे उन्होंने अपने पिता का ऋण चुकाया।

1894 में अपने पैंतीसवें जन्म दिन पर डॉ. जगदीश चन्द्र बसु ने वैज्ञानिक अनुसंधान कार्य को आगे बढ़ाने का निर्णय लिया। उन्होंने प्रेसिडेंसी कॉलेज में दिये गये एक 24 वर्गफुट वाले छोटे-से कमरे में अपने अनुसंधान किये। विद्युत विकिरण पर अपने पहले अनुसंधान के लिए एक नये उपकरण के आविष्कार और निर्माण के लिए उन्होंने एक अशिक्षित टिन कारीगर की सहायता ली। रेडियो तंरगों के उत्पादन के लिए बसु ने एक अद्‌भुत और उच्च संवेदी रेडियो रिसीवर 'कोहिरर' बनाया। उन दिनों यूरोप में प्रयोग किये जा रहे कोहिरर की अपेक्षा बसु का कोहिरर बहुत ज्यादा उन्नत, कुशल और प्रभावी था। इस सुधरे उपकरण का प्रयोग करते हुए बसु ने रेडियो तंरगों की विभिन्न विशेषताओं जैसे परावर्तन, अवशोषण, व्यतिकरण, दोहरे परावर्तन और ध्रुवण के अलावा 1 से सेमी. से 5 मिमी. तक छोटी रेडियो तंरगों के नये प्रकारों को भी प्रदर्शित किया। ऐसी तंरगों को अब माइक्रोवेव कहते हैं। बसु के माइक्रोवेव अनुसंधान का पहला उल्लेखनीय पहलू यह था कि उन्होंने तरंग दैर्ध्य को लगभग 5 मिमी. के स्तर पर ला दिया। वे प्रकाश के गुणों के अध्ययन के लिए लंबी तरंग दैर्ध्य की प्रकाश तरंगों के नुकसान को समझ गये थे। बसु ने अपने कोहिरर को बेहतर करने की योजना बनाई लेकिन इसके पेटेंट के बारे में कभी नहीं सोचा।

बसु ने कोलकाता में नवम्बर 1894 (या 1895) के एक सार्वजनिक प्रदर्शन के दौरान एक मिमी. रेंज माइक्रोवेव तरंग का उपयोग बारूद को दूरी पर प्रज्ज्वलित करने और घंटी बजाने में किया। बंगाल के लेफ्रिटनेंट गवर्नर विलियम मैकेंजी ने कलकत्ता टाउन हॉल में बसु का प्रदर्शन देखा। बसु ने एक बंगाली निबंध-'अदृश्य आलोक' में लिखा था, 'अदृश्य प्रकाश आसानी से ईंट

की दीवारों, भवनों आदि के भीतर से जा सकता है, इसलिए तार के बिना प्रकाश के माध्यम से संदेश संचारित हो सकता है।'

अक्टूबर, 1895 में 'विद्युत किरण के लिए सल्फर के अपवर्तन के आंकड़ों का निर्धारण' शीर्षक वाला डॉ. बसु का शोधपत्र रॉयल सोसाइटी लंदन ने न केवल प्रकाशित किया बल्कि अनुदान देकर उसके लिए वित्तीय सहायता भी दी, ताकि बसु अपना अनुसंधान कार्य जारी रख सकें। लंदन यूनिवर्सिटी ने बिना किसी परीक्षा के उन्हें डॉक्टर ऑफ साइंस (D.Sc.) की उपाधि प्रदान की। दिसम्बर 1895 में लंदन की पत्रिका इलेक्ट्रीशियन ने बसु का लेख 'एक नया इलेक्ट्रो-पोलेरीस्कोप' प्रकाशित किया। इलेक्ट्रीशियन ने बसु के 'कोहिरर' पर टिप्पणी की-'यदि प्रोफेसर बसु अपने कोहिरर को बेहतरीन बनाने और पेटेंट लेने में सफल होते हैं तो हम शीघ्र ही एक बंगाली वैज्ञानिक के प्रेसीडेंसी कॉलेज प्रयोगशाला में अकेले किये शोध के कारण नौ-परिवहन की तट प्रकाश-व्यवस्था में नई क्रांति देखेंगे।'

अनुसंधान में बसु की सफलता और इंग्लैंड तथा अन्य पश्चिमी देशों के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों द्वारा उनकी प्रशंसा का भारत में भी प्रभाव पड़ा। लैफ्टि. गवर्नर मेकेंजी का ध्यान बसु के काम की ओर गया और उसने उन परिस्थितियों में सुधार कराया जिनमें बसु काम कर रहे थे। बसु के लिए वेतन वृद्धि के साथ अधिक शक्ति सम्पन्न एक नया पद सृजित किया गया, जिसमें अनुसंधान के लिए उपयुक्त अवकाश था।

मेकेंजी की पहल पर शिक्षा विभाग ने बसु को छः माह के लिए प्रतिनियुक्ति पर इंग्लैंड भेजने की स्वीकृति दे दी और वे 24 जुलाई 1896 को वहाँ के लिए रवाना हो गये। उन्होंने लिवरपूल में विज्ञान की उन्नति के लिए ब्रिटिश संघ की बैठक में रेडियो तरंगों पर अपनी नई खोजों पर लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिकों की उपस्थिति में भाषण एवं प्रदर्शन दिया। अनुसंधान में अपनी सफलता के बाद बोस की अंग्रेज वैज्ञानिकों के साथ यह पहली भेंट थी। बसु के प्रस्तुतीकरण से उपस्थित वैज्ञानिक अत्यधिक प्रभावित हुए। लॉर्ड केल्विन महिला गैलरी में श्रीमती अबाला बसु को उनके पति के शानदार कार्य के लिए बधाई देने गये। रॉयल इंस्टीट्यूट ने भी उन्हें भाषण देने के लिए आमंत्रित किया। यह बड़े सम्मान की बात थी। भारत सरकार ने भाषण तैयार करने के लिए उनकी प्रतिनियुक्ति को तीन माह के लिए बढ़ा दिया। बसु ने वहाँ 19 जुलाई 1897 को 'विद्युत किरणों का ध्रुवण' शीर्षक भाषण दिया। बसु को सुनने के लिए पाँच सौ से ज्यादा लोग एकत्र हुए जिनमें ओलिवर लॉज, सर जेम्स जानसन थॉम्सन और लॉर्ड केल्विन शामिल थे। भाषण की न केवल प्रशंसा हुई बल्कि इसे रॉयल सोसाइटी के कार्यकलापों में प्रकाशन के लिए भी बहुत मूल्यवान समझा गया और उन्हें भौतिक सोसाइटी पेरिस और बर्लिन के विख्यात भौतिक-वैज्ञानिकों ने चर्चा के लिए आमंत्रित किया।

आचार्य बसु को पुरातन भारतीय ऋषियों की विरासत कि पौधों की भी अपनी 'भावनाएँ' होती हैं पर विश्वास था। अंततः बसु जीवित-अजीवित के बीच नैसर्गिक रूप से छिपी चेतना को पहचानने में सफल हो गये। उन्होंने पाया कि वनस्पतियाँ सुख-दुख आदि की तीव्र प्रतिक्रिया देती हैं। उनमें भी चेतना और जीवन होता है और वे सुख, दुख, भूख, निद्रा आदि का स्पष्ट अनुभव तो करती ही हैं, उन पर आसपास के पर्यावरणीय तथा भौतिक घटनाओं का अन्य जीव-जंतुओं व मनुष्यों की तरह अच्छा-बुरा प्रभाव पड़ता है। अपनी इन स्थापनाओं को सत्यापित करने के लिए डॉ. बसु ने अनेक सूक्ष्म तथा बहुत ही जटिल यंत्रों का आविष्कार किया जिनके माध्यम से वनस्पतियों की दुनिया में छिपे अनेक गूढ़ रहस्यों को उजागर कर पूरी दुनिया को अचंभित कर दिया। डॉ. बसु के साथ अत्यंत संवेदशील भारतीय टेलीग्राफ प्लांट-लाजवंती व छुई-मुई (मानोसा पुडीक और डेस्मोनडियम जायरन्स) का उल्लेख मिलता है। जिसको छूते ही उसकी छोटी-छोटी पत्तियों के खुले हुए जोड़ तत्काल बंद हो जाते हैं और पर्णवृंत (डंठल) झुक जाता है। इसीलिए बसु ने अपने अधिकांश प्रयोग इन्हीं पर किये। उन्होंने पाया कि इसकी पत्तियों के जोड़ों पर मौजूद अत्यंत संवेदनशील व छोटे-छोटे पीनाधार कब्जों की तरह काम करते हैं। पीनाधार का निचला आधा हिस्सा ऊपर के आधे हिस्से की अपेक्षा अस्सी गुना अधिक संवेदनशील तथा ज्यादा सक्रिय होता है। इसी कारण पत्तियों को उत्तेजित

करते ही संवेदनशील कब्जे तुरन्त बंद हो जाते हैं और साथ ही पूरा डंठल भी तत्काल बड़ी तेजी से नीचे झुक जाता है।

लाजवंती के पौधे की इस प्रतिक्रिया का ग्राफ तैयार करने व अन्य प्रयोगों के लिए प्रो. बसु ने अत्यंत जटिल व संवेदनशील यंत्र तैयार किये। अनेक प्रयोगों से डॉ. जगदीश चन्द्र बसु ने सिद्ध कर दिखाया कि वनस्पतियाँ भी अन्य प्राणियों के समान चैतन्य हैं और उनमें भी भावनाएँ-संवेदनाएँ होती हैं।

सन 1900 में उन्होंने भौतिक-वैज्ञानिकों की पेरिस इंटरनेशल कांग्रेस के सामने अपना शोध-पत्र 'अजैव और जीवंत पदार्थों की समान अनुक्रियाएँ' पढ़ा। विज्ञान में पहली बार किसी ने जीवित ऊतकों तथा अजैव पदार्थ के ऊतकों की उत्तेजना अनुक्रियाओं को समांतर रूप से देखा और उनकी तुलना की। कांग्रेस में बसु के शोधपत्र को अत्यंत महत्वपूर्ण समझा गया और इसे कांग्रेस के कार्य-विवरणों में प्रकाशित किया गया। वहाँ बसु को सुनने के लिए स्वामी विवेकानन्द भी उपस्थित थे। जिसके बारे में स्वामी विवेकानन्द ने लिखा-'यहाँ पेरिस में प्रत्येक देश के महान लोग एकत्र हुए हैं। यहाँ विद्वानों का जय-जयकार और उनके देशों को महिमा-मंडित किया जायेगा। ओ मेरी मातृभूमि! विश्व के सब भागों से एकत्र इन श्रेष्ठ आदमियों के बीच इस भारी भीड़ में तुम्हारे ओजस्वी पुत्रों में से एक युवक तेरे लिए खड़ा है। यहाँ जिसके शब्दों ने श्रोताओं को चौंका दिया।' उनकी प्रशंसा में रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी कविता के रूप में अपने भाव व्यक्त किये।

डॉ. बसु ने 10 मई 1901 को रॉयल इंस्टीट्यूट में जैव तथा अजैव की प्रतिक्रियाओं पर अपने अनुसंधान के बारे में अपना दूसरा भाषण दिया। इसके बाद उन्होंने 6 जून 1901 को रॉयल सोसाइटी में अपना शोधपत्र पढ़ा, जिसमें उन्होंने प्रतिपादित किया कि यांत्रिक, तापीय, विद्युतीय, रासायनिक और ड्रग्स जैसे विभिन्न प्रकार के उद्दीपकों के प्रति वनस्पति ऊतक वैसी ही विद्युतीय अनुक्रिया उत्पन्न करते हैं जैसी कि जैव ऊतकों द्वारा की जाती है। अपनी खोजों के लिए उन्होंने कई नये और उच्च संवेदी यंत्रों का आविष्कार किया। इनमें से अत्यधिक महत्वपूर्ण यंत्र था-क्रेस्कोग्राफ का प्रयोग पौधों का विकास मापने के लिए किया जाता है।

इस प्रकार प्रो. बसु ने न केवल जैव-एकता की युगों पुरानी भारतीय मान्यता को वैज्ञानिक आधार दिया। वरन् वे ज्ञान को सार्वजनीन अनुप्रयोग के निमित्त निर्बाध बनाना चाहते थे। इसीलिए वे अपने अविष्कारों का व्यक्तिगत लाभ लेने के लिए पेटेंट कराने के बहुत विरुद्ध थे। उनका निश्चय था कि विज्ञान का अनुसरण अपने लिए नहीं बल्कि मानवता की भलाई के लिए होना चाहिए। जब उन्होंने रॉयल इंस्टीट्यूट लंदन में अपने भाषण के दौरान अपने बनाये कोहिरर को प्रस्तुत किया था, तब वहाँ के वैज्ञानिकों को आश्चर्य हुआ कि किसी भी समय इसके निर्माण को गुप्त नहीं रखा गया और यह सारे विश्व के लिए खुला है। संभवत: इसका इस्तेमाल धन पैदा करने के लिए किया जाये। सन 1901 में वायरलेस उपकरण का एक बड़ा निर्माता बसु के पास उनके नये रिसीवर के लिए एक लाभकारी करार पर हस्ताक्षर कराने आया, परन्तु उन्होंने उसे नकार दिया।

बसु को नियमानुसार 55 वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवानिवृत्त होना था, परन्तु उनकी सेवाओं तथा वैज्ञानिक उपलब्धियों को देखते हुए सरकार ने उनके सेवाकाल को दो वर्ष के लिए बढ़ा कर 1915 में भौतिकी के सीनियर प्रोफेसर के रूप में पेंशन की बजाय पूर्ण वेतन पर सेवानिवृत्त किया। वे प्रेसिडेंसी कॉलेज के साथ स्थायी तौर पर जुड़े रहे और सेवानिवृत्ति के बाद भी अपने घर में स्थापित एक छोटी प्रयोगशाला में वनस्पति व शरीर-विज्ञान सम्बंधी अनुसंधानों में निरंतर जुटे रहे।

डॉ. जगदीश चंद्र बसु ने अपना पूरा शोधकार्य बिना किसी अच्छे (महंगे) उपकरण और प्रयोगशाला के किया था। इसी दौरान वे एक अच्छे अनुसंधान संस्थान को स्थापित करने के लिए भी काम कर रहे थे और बसु इंस्टीट्यूट (बोस विज्ञान मंदिर) उनकी इसी सोच का सुपरिणाम है जो वैज्ञानिक शोधकार्य के लिए आज भी राष्ट्र का एक प्रसिद्ध केन्द्र है। इस संस्थान का स्थापना समारोह 23 नवंबर 1917 को हुआ। बसु ने इसके लिए लगभग 11 लाख रुपये की राशि एकत्र की और इस प्रयास में उनके मित्र रवीन्द्रनाथ टैगोर ने उनकी पर्याप्त

सहायता की। उनका उद्घाटन भाषण अत्यन्त स्फूर्तिदायक था जिसमें उन्होंने अपने जीवन आदर्शों को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया। उसका एक अंश उद्धृत है—

''मैं इस संस्थान को आज समर्पित करता हूँ—जो केवल प्रयोगशाला नहीं बल्कि एक मंदिर है। इस संस्थान का मुख्य उद्देश्य विज्ञान की तरक्की और ज्ञान का प्रसार है। मैं चाहता हूँ कि ज्ञान की उन्नति को यथासंभव इसके व्यापक नागरिक और लोक प्रसार के साथ स्थायी रूप से सम्बद्ध किया जाये और ऐसी शैक्षणिक सम्बद्धता किसी भी प्रकार की सीमाओं के बिना सबके लिए समान रूप से भविष्य में सदैव की जाये। यहाँ दिये गये लैक्चर सुने-सुनाये ज्ञान की मात्र पुनरावृत्ति नहीं होंगे। इस प्रकार ज्ञान की प्रगति और प्रसार में सक्रिय भाग लेते हुए ज्ञान के बड़े अधिष्ठान के उच्चतम लक्ष्यों को सदा बनाये रखेंगे। संस्थान के कार्य-सम्पादन के नियमित प्रकाशन द्वारा ये भारतीय योगदान समस्त विश्व तक पहुँचेंगे। इस प्रकार की गई खोजें लोक सम्पत्ति बन जाएंगी। यहाँ के विद्वान अपने कार्य के द्वारा विशेष अभिरुचि दिखाएंगे और अनुसंधान के लिए अपने सारे जीवन को समर्पित करेंगे। अवश्य ही उनकी संख्या सीमित होगी, परंतु हमारे लिए मात्रा नहीं बल्कि विशिष्टता अत्यंत महत्वपूर्ण है। मेरी इच्छा है कि इस संस्थान की सुविधाएँ अन्य देशों के अध्येताओं के लिए उपलब्ध रहनी चाहिए। ऐसा करते हुए मैं अपने देश की परंपरा को ही आगे बढ़ा रहा हूँ , जिसने पच्चीस शताब्दियों पहले नालंदा और तक्षशिला के अपने ज्ञान अधिष्ठानों की सीमाओं में विश्व के विभिन्न भागों से सब विद्वानों का स्वागत किया।'

'अमरत्व के बीज पदार्थ, सम्पत्ति और उपलब्धियों में नहीं बल्कि आदर्शों में पाये जायेंगे। मानवता का सच्चा साम्राज्य भौतिक अर्जन से नहीं बल्कि विचारों और आदर्शों के प्रचुर प्रसार से स्थापित किया जा सकता है। एक बड़े राज्य के स्वामी सम्राट अशोक के लिए एक समय ऐसा भी आया जब देने के लिए केवल आधे आम्लकी (आँवला) फल को छोड़ उसके पास कुछ भी नहीं बचा था। वही उसकी अंतिम सम्पत्ति थी और उसकी मनोव्यथा थी कि चूँकि उसके पास देने के लिए कुछ भी नहीं बचा है इसलिए उस आधे आम्लकी को ही उसके अंतिम उपहार के रूप में स्वीकार किया जाये। अशोक के आम्लकी को इस संस्थान के कारनिस पर प्रतीक स्वरूप देखा जायेगा। ऋषि दधीचि ने अपना जीवन बुराई की समाप्ति और अच्छाई को बढ़ाने के लिए प्रस्तुत किया, ताकि उनकी हड्डियों से दिव्य अस्त्र—वज्र बनाया जा सके। हमारे पास केवल आधा आम्लकी है जिसे हम इस समय प्रस्तुत कर सकते हैं लेकिन आगे अधिक अच्छे भविष्य में भूतकाल का पुनर्जन्म होगा। हम यहाँ आज खड़े हैं और कल काम आंरभ करेंगे। ताकि हमारे जीवन के प्रयासों और भविष्य में अडिग विश्वास द्वारा हम सब आने वाले महान भारत के निर्माण में सहायता दे सकें।''

बसु के उस उद्घाटन-भाषण का भारत और विदेशों में गहरा प्रभाव हुआ। लंदन के एक अग्रणी समाचार पत्र 'दि टाइम्स' ने लिखा—'' भारत में वैज्ञानिक पुनर्जागरण लाने में सर जगदीश चन्द्र बसु का योगदान प्रभावशाली है। भारतीयों को कुछ लोगों की उपलब्धि पर उचित गर्व है जिन्होंने विशेष क्षेत्रों में विश्व-व्यापी ख्याति प्राप्त की है, और इस गर्व की लोकमत पर मजबूत अनुक्रिया हुई है। अनुसंधान संस्थान के प्रकाशित कार्य-विवरणों से पता चलता है कि इस प्रसिद्ध बंगाली के नेतृत्व में भारतीय अनुसंधान वैज्ञानिक ज्ञान को भारी योगदान दे रहा है और इस क्षेत्र में पश्चिमी तथा पूर्वी मन में कोई मूलभूत अंतर नहीं है, जैसा कि समझा गया था जब सर जगदीश ने अपना काम शुरू किया था।''

1903 में ब्रिटिश सरकार ने बसु को दिल्ली में कमांडर ऑफ दि ऑर्डर ऑफ दि इंडियन एम्पायर (CIE) से सम्मानित किया। उन्हें 1912 में कमांडर ऑफ दि स्टार इंडिया (CSI) से विभूषित किया गया। जगदीश चंद्र बसु को 1917 में 'नाइट (Knight) की उपाधि प्रदान की गई तथा वे शीघ्र ही भौतिक व जीव विज्ञान के लिए रॉयल सोसायटी लंदन के फैलो चुन लिये गये। 1928 में बसु को रॉयल सोसाइटी के फैलो (FRS) के रूप में चुना गया।

जेडेस का एक उद्धरण है-'जगदीश बसु की जीवन-कथा सब नौजवान भारतीयों द्वारा गहरे और प्रबल विचार के योग्य है जिनका उद्देश्य विज्ञान की सेवा या सामाजिक भावना के अन्य उच्च कार्य के लिए अपने आपको तैयार करना है। यह संभव है कि मंजिल की

विकटता, लक्ष्यों की धीमी गति और मूल्यवान उपलब्धि के कारण वे सोच सकते हैं कि बौद्धिक सृजन की उपलब्धि हेतु एक शानदार प्रयोगशाला या अन्य भौतिक सुविधाएँ जरूरी हैं, परंतु वास्तव में सच्चाई इससे बहुत भिन्न है। बसु को जिन अनगिनत अवरोधों को पार करना पड़ा उसके लिए उन्होंने पुरुषोचित स्वभाव में निहित सब प्रकार की सहनशीलता और सब प्रयासों का आह्वान किया। चरित्र की पूर्ण शक्ति और विचार की तीव्रता के साथ उन्हें जोड़ने से एक महान कार्य सम्पन्न किया जा सकता है। अपने साथी देशवासियों के महान कैरियर पर विचार करते हुए युवा भारत प्रेरित होगा कि अपने दिमाग और हाथों को बढ़िया कार्यों में निडर होकर लगाये। इस प्रकार वह न केवल विगत भारत की शानदार बौद्धिक परम्परा को पाने के लिए प्रेरित होगा, बल्कि इन परम्पराओं की आधुनिक युगों में पुनर्परिभाषा करेगा और आने वाले जमाने के साथ महत्वपूर्ण सम्बंध प्राप्त करने हेतु मन तथा आत्मा के लिए भारी चुनौती पायेगा।'

बसु का निधन 23 नवम्बर 1937 को गिरिडीह (बिहार) में हुआ।

***

राजीव नगर, बिन्दुखत्ता,
लालकुआँ 9410 517799
ssrawat.nt@gmail.com

अगवानी -राकेश 'चक्र'

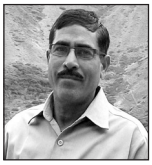

जिला कलैक्टर साहिबा ने प्रथमबार नियुक्ति के बाद प्रथम ही मीटिंग में लापरवाह अफसरों के पेंच इतनी जोर से कसे कि वे सभी बुरी तरह तिलमिला गये। कलैक्टर साहिबा आईएएस परीक्षा की मैरिट होल्डर। कुछ करने-कराने का उत्साह नई उमंग नई तरंगें, जो उनमें न जाने कब से हिलोरें ले रही थीं।

सरकार के प्रभाव ाली मंत्री जी का गृह जनपद। जब मंत्री जी का दौरा होता, तब चापलूस, कामचोर, घूसखोर कर्मचारियों, ठेकेदारों तथा अन्य वैध-अवैध काम करने और कराने वालों चमचों का ऐसा जबरदस्त आकर्षण होता कि जैसे तितलियाँ और मधुमक्खियाँ फूलों की ओर खिंची चली आ रही हों। इतना लाव-लश्कर देखकर मंत्री जी फूलकर कुप्पा हो जाते अस्वाभाविक खुशियों की बौछारें होतीं जगमग ज्योति भरी रातें होतीं। ऐसा प्रतीत होता था कि राजतंत्र कभी मरेगा नहीं तथा प्रजातंत्र में वह अपने खूनी पंजे गढ़ाकर गौरवान्वित और महिमामण्डित होता रहेगा।

मंत्री जी का कलैक्टर साहिबा की नियुक्ति के बाद प्रथमबार दौरा हुआ। भ्रष्टों-चापलूसों की गणेश परिक्रमा शुरू हो गई, लेकिन कलैक्टर साहिबा अगवानी के लिये नहीं पहुँचीं। कलैक्टर साहिबा की सख्ती का मामला भी मंत्री जी की गोष्ठी में गूँजा जिले में बहुत खराब कलैक्टर को आपने भेजा है बहुत भ्रष्ट है बिना पैसे लिये किसी का काम नहीं करती हैं शहर का विकास ठप्प हो गया है और न जाने क्या-क्या?

मंत्री जी का यह सब देख-सुनकर पारा चढ़ना स्वाभाविक ही था कि जिले की कलैक्टर की ये हिम्मत की वह बंगले पर अगवानी करने न पहुँचे। मंत्री जी के आदेश पर पीए ने कलैक्टर को फोन घुमाया। आदेश के अंदाज में पीए ने कहा, ''मैडम! बंगले पर तुरंत पहुँचिये। मंत्री जी ने बुलाया है।''

कलैक्टर साहिबा मंत्री जी के बंगले पर हाजिर हुईं, जहाँ चापलूसों की फौज से मंत्री जी घिरे हुये थे। मंत्री जी ने बिना देर लगाये सवाल दागा, ''आपकी तो मेरे पास बहुत शिकायतें आ रही हैं एक महीने में ही शिकायतों का इतना बड़ा पुलिन्दा जिले में रहना है या नहीं।

झूठे मनगढ़न्त आरोप एवं अपमान से स्वाभिमान, ईमान और हिन्दुस्तान हिल गया कि जैसे यकायक पृथ्वी में आठ रियेक्टर का भूकंप आ गया हो।

''नहीं''

यह कहते हुये कलैक्टर साहिबा के कदम गाड़ी की ओर मुड़ गये थे।

अगले दिन कलैक्टर साहिबा को स्थानांतरण का फैक्स मिल गया था।

***

90, शिवपुरी, मुरादाबाद
मोबाइल : 09456201857

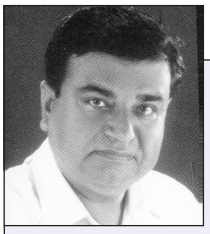

हमारा क्षितिज-2 —डॉ सुधकर अदीब

डॉ. सुधाकर अदीब का उपन्यास 'हमारा क्षितिज' अपने आप में विलक्षण है। इसका प्रत्येक भाग एक-दूसरे से सम्प्रक्त होने के बाद भी स्वयं में एक परिपूर्ण कहानी है और प्रबुद्ध वर्ग को कुछ सोचने के लिए विवश करता है। पूर्व में नयी सदी अंश में कथा नायक लम्बे अरसे के बाद अयोध्या आता है तो उसे पूर्व स्मृतियाँ घेर लेती हैं। राम मन्दिर के दर्शन करने में आने वाली असुविधओं को इस अंश में बड़ी सुन्दरता से उकेरा गया है। अब आगे पढ़ें

अछूत और अंगारे—

मेरे बचपन के दिन बहुत निराले थे। बात उन दिनों की है, जब मैं केवल पाँच वर्ष का था। बवंडर उठाते मई-जून के दिन। सन्1960 की गर्मियों के दिन।

जंबूद्वीप के भरतखण्ड में अवस्थित उत्तर प्रदेश का ऐतिहासिक नगर फैजाबाद। पौराणिक नगरी अयोध्या का जुड़वां भाई जैसा। बिल्कुल उसके सन्निकट और उसमें बसा हुआ मोहल्ला राठ हवेली।

उन दिनों दोपहर के समय नित्य की भान्ति मोहल्ले के लड़के पंडित जी की कोठी के पश्चिम कोने में इकट्ठे हो जाते। जहाज़ी कोठी का वह एकांत भाग अधिकतर सुनसान ही रहता था। उसका बराण्डा इसीलिए बच्चों के खिवाड़ और ड्रामे के लिए सबसे उपयुक्त जगह थी। बाबूराम, श्यामजी, गोपी, इंदर, मैं और अल्टू-सल्टू टाइप के एक-दो और लड़के और मुहल्ले की कुछ लड़कियों को भी इस नाटक-नौटंकी में शामिल कर लिया जाता।

कोठी के बाहरी बराण्डे का वह निराला कोना ही मेकअप रूम था, वही स्टेज और वही थियेटर। गत्ते के टुकड़ों को काट-काटकर तलवार, भालों और मुकुट की शेप दी जाती। फिर उन पर चावल की लेई से सिगरेट के पैकेट्स से निकली चाँदी जैसी पन्नियाँ चिपका कर धातु का रूप दिया जाता। नाटक के अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण हेतु बाँस की खपच्चियों, नरकुल, सिगरेट के खाली पैकेट्स आदि जमा करने का दौर खाली दिनों में चलता रहता था।

मूँछ और दाढ़ी बनाने के लिए कोयले का प्रयोग होता। थोड़े-से कोयले पीसकर उनमें पानी मिलाकर उँगली से मूँछें बनाने की कला में बाबूराम माहिर था। सफेद दाढ़ी-मूँछ बनाने के लिए खड़िया या चाक का प्रयोग होता।

बाबूराम अन्य बच्चों की अपेक्षा आयु में दो-तीन वर्ष बड़ा था और नाटक मण्डली का वही जनक था, वही डाइरेक्टर और वही सबकुछ। हम सब उसी की ओर देखते थे, उसी की सुनते थे। उसी के कहे अनुसार सब करते थे। गाँव की रिश्तेदारियों में जब बाबूराम को परिजनों के साथ जाना होता तो वहाँ होने वाली नौटंकियों से बहुत सारी स्मृतियाँ बटोरकर वह शहर लौटता था। भक्त पूरन, पन्ना धाय, सुल्ताना डाकू, लैला-मजनू, राम-लखन, सीता, हनुमान, उसके पास एक से बढ़कर एक नाटकों का ख़ज़ाना था।

बाबूराम जब कोई 'सीन' सुनाता तो मोहल्ले के लड़के-लड़कियाँ उसे ओखें फाड़े देखते। कोई-कोई कुछ भी न समझ पाता और खड़िया पीसकर अपने गालों पर पाउडर लगाता जाता। इस नाटकबाजी का अधिकांश समय बाबूराम से सीन समझने में लगता या फिर मेकअप करने और सजने-संवरने में। असली खेल तो शायद ही कभी शुरू हो पाता। एक-दो डॉयलॉग होते ही बराण्डे के दूसरे छोर पर छोटे दरवाजे की कुण्डी खटकती और एक कड़कती हुई भारी आवाज़ मुझे पुकारती, ''क्या हो रहा है? सौरभ, कहाँ हो तुम?''

''अरे बाप रे! पंडित जी आ गए।'' बाबूराम तड़पकर कहता।

उसके बाद वहाँ भगदड़ मच जाती। भदर-भदर करके लड़के-लड़कियाँ वहाँ से बंदरों की तरह जान छुड़ाकर भागते। कोई दायें से, कोई बाएँ से। कोई कोठी की दीवार फाँदता। किसी के भागते हुए गिर जाने से हाथ-पाँव छिल जाते। ऐसा लगता, जैसे वह कलाकारों की जमात न होकर कोई चोरों की बारात हो, जिसे पकड़ने अथवा छिन्न-भिन्न करने के लिए वहाँ एक दारोगा आ गया हो। वह भारी आवाज़ मेरे प्यारे नाना जी की थी। पता नहीं मोहल्ले के लड़के उनसे इतना क्यों डरते थे?

नाटक का मैदान खाली हो जाता और इस तरह सारा मज़ा पल-भर में किरकिरा हो जाता। मुझे नाना जी हौले

से कान पकड़कर कोठी के भीतर ले जाते, ''लू भरी दोपहर में यह कोई खेलने का वक्त है? चलो, सो जाओ चल के। जब देखो तब शरारत....जब देखो...।''

मुझे नानाजी और हरि मामू ने एक-दो बार टोका भी था कि बाबूराम के साथ न खेला करूँ।

''क्यों?'' मेरे इस प्रश्न का कोई सीधा उत्तर नहीं दिया था उन्होंने।

बाबूराम यद्यपि अछूत नहीं था, परन्तु आज की भाषा में यदि कहें तो वह दलित अवश्य था और हम लोग सवर्ण।

एक बार कालान्तर में एक स्कूल का फार्म भरते समय बाबूराम ने मेरी सहायता ली थी। नाम, पिता का नाम, राष्ट्रीयता, धर्म के बाद जाति का कॉलम आया। मेरे द्वारा प्रश्नवाचक दृष्टि से देखने पर एक पल को बाबूराम खामोश रहा फिर उसने मुझसे नज़र मिलाए बिना कहा, 'कोरी।'

कोरी कहने में बाबूराम ने ख़ासी मशक्कत की। पहले कहा, को, फिर वह रुका। जब मैंने लिख लिया तो उसने झटके से, मगर आवाज़ को कुछ दबाते हुए कहा, री।

उसके कहने का अन्दाज़ कुछ ऐसा था जैसे वह अपनी जाति छिपाना चाहकर भी मेरे सामने वैसे न छिपा पा रहा हो जैसे कभी सुदामा श्रीकृष्ण के सामने अपनी काँख में दबी चावलों की पोटली नहीं छिपा पाए थे। मुझे बाबूराम पर उस समय बड़ा तरस आया था।

उन्हीं दिनों की एक और घटना है, जब मुझे अछूत शब्द के व्यवहारिक अर्थ देखने को मिले। नाना की कोठी में सुबह-सुबह लछमिनियाँ नाम की एक जमादारिन आती थी। घर के दूसरे सेवक सदर दरवाजे से प्रवेश करते थे, लछमिनियाँ के आने का रास्ता कोठी के उत्तर-पश्चिमी द्वार था, जो नाले की ओर खुता था।

कोठी के उसी हिस्से में दो फ्लश लैट्रीन बनी थीं। शौच के लिए दोनों में एक-एक नल की टोंटी थी, परन्तु लछमिनियाँ को शौचालयों की धुलाई-सफ़ाई के लिए उन टोंटियों को छूने की इजाज़त नहीं थी।

लछमिनियाँ के लिए एक मिट्टी का पुराना घड़ा था, जो लैट्रीन के पीछे एक कोने में सींक की झाड़ू के साथ धरा रहता था।

लछमिनियाँ रोज़ सुबह आती। घड़ा उठाकर आँगन के कोने में नाली के पास रखती। घर का सेवक विशाल कुछ दूर पर बर्तन माँजता रहता था। जब उसे अपने काम से फुर्सत मिलती वह एक बाल्टी में पानी भरकर तीन फुट की ऊँचाई से लछमिनियाँ के घड़े में पानी की धार छोड़ता।

विशाल को ऐसा करने में विशेष तकनीकी योग्यता हासिल थी। पानी छोड़ते समय वह इस बात का पूरा ध्यान रखता रखता कि बाल्टी का पानी सीधा घड़े के मुँह में जाए। मजाल है, जो पानी का एक भी छींटा विशाल के पैरों पर गिर जाए।

एक दिन विशाल जमादारिन के प्रवेशद्वार की कुण्डी खोलकर कहीं चला गया। बर्तन उस दिन माँजे नहीं गए थे। इधर-उधर बिखरे हुए थे। लछमिनियाँ रोज की तरह आई और घड़ा नाली पर रखकर आँगन का वह तिरस्कृत कोना बुहारने लगी। बुहारकर जब पलटी तो उसकी धोती का निचला सिरा जूठे बर्तनों को छू गया। मेरी नानी ने देख लिया।

''आय-हाय-हए-ए....!'' वह दूर से ही चीखीं, ''भ्रष्ट कर डाला।'' नानी अपने सीने पर थपकियाँ दे रही थीं। घर के मुख्य सेवक को कोसती हुई पुकार रही थीं, ''ओ विशाल! अरे, कहाँ मर गया कम्बख़्त?''

विशाल के आने पर उसे डाँटने-फटकारने लगीं। मेरी कुछ समझ में नहीं आया कि हुआ क्या है? लछमिनियाँ इस बीच आकर नौकर से घड़े में पानी लेकर चली गई। उस दिन वह बहुत सहम गई थी।

फिर मेरे देखते ही देखते नानी के निर्देशानुसार सारे जूठे बर्तन आँगन में एक तरफ इकट्ठा किए गए। उसके बाद रसोई के चूल्हे से धधकते हुए कुछ अंगारे लाए गए। उन अंगारों को सभी बर्तनों में थोड़ा-थोड़ा डाला गया।

आधे घण्टे बाद जब सभी अंगारे शान्त हो गए तो उन्हीं की राख से विशाल ने सारे बर्तन माँजे और फिर साफ पानी डालकर उन्हें शुद्ध किया। गोया घर के बर्तन जो एक अछूत कन्या के छू जाने से भ्रष्ट हो गए थे, उनको जलते हुए अंगारों ने अपने स्पर्श से पुनः पवित्र कर दिया।

इस घटना के कुछ ही दिनों बाद वहाँ एक और दुर्घटना हो गई। यह हादसा मेरे लिए पहले से भी अधिक विस्मयकारी था।

हुआ यूँ कि विशाल उस दिन अपनी निर्धारित जगह पर सुबह-सुबह बर्तन धो रहा था। लछमिनियाँ उधर तयशुदा फासले पर अपना घड़ा नाली पर टिकाए, विशाल के खाली होने की प्रतीक्षा कर रही थी।

''ऐ विशाल, तनी जल्दी करो.... हमका देर होत है।'' लछमिनियाँ कह रही थी। उसके स्वर में आज चिरौरी का

पुट ज़रा ज़्यादा था।

इधर मेरी छोटी बहन कीर्ति फॉक पहने आँगन में इधर से उधर दौड़ लगा रही थी। उस पर आज कुछ ज़्यादा मस्ती सवार थी। एकाएक हवाई जहाज़ की तरह डोलती हुई वह छोटी-सी बच्ची विशाल के पास गई।

खेल-खेल में उसने विशाल की पीठ पर एक धप्पी मारी। विशाल ने उसे ज़रा हड़काया। बच्ची ने उसे मुँह चिढ़ाया। विशाल ने फिर से उसे घुड़की दी। इस पर वह खिलखिलाते हुए जो मुड़ी तो दिशा भटक गई और भागते-भागते कोने के द्वार पर खड़ी लछमिनियाँ जमादारिन से जा टकराई।

विशाल जब तक दौड़कर बच्ची को पकड़ता वह जमादारिन की धोती से किलकारियाँ मारती हुई पूरी तरह लिपट चुकी थी। बाल सुलभ क्रीड़ा।

ग़ज़ब हो गया। आह्लाद और खिलवाड़ के ये क्षण देखते ही देखते तूफान में बदल गए। नानी ने चीख-चीख कर आसमान सिर पर उठा लिया। यह किसी गुरिल्ले की भाँति आज छाती कूट रही थी। उसके शोर-शराबे में लछमिनियाँ नाली की ओर खिसक गई।

छोटी बच्ची हक्की-बक्की हो अपनी जगह जड़ हो गई। जड़वत आखिर क्यों नहीं होती? नानी ने उसे, ''यहीं खड़ी रह, हिलना मत। नहीं तो बहुत मारूँगी।'' कहकर भयाक्रान्त कर दिया था।

मैं धक से रह गया, अब क्या होगा? क्या मेरी बहन पर भी अंगारे डाले जाएँगे? क्या उसे भी बर्तनों की भाँति शुद्ध किया जाएगा?

तभी मैंने देखा, सेवक विशाल ने नानी के आदेश पर पहले दो बाल्टी पानी अपराधिनी बच्ची पर डाला। फ्रॉक पहने हुए उस मूर्ति सरीखी बाला को ऊपर से नीचे तक पानी से सराबोर कर दिया गया।

फिर उसे आँगन में एक कोने में कपड़े उतार कर नहाने के निर्देश नानी ने दिए। विशाल ने बाल्टी से उसके ऊपर फिर पानी डाला। कुछ-कुछ वैसे ही जैसे कि वह जमादारिन के मिट्टी के घड़े में पानी डालता आया था।

मेरी छोटी बहन कीर्ति रोती जाती और नहाती जाती। जब वह नहा-धो चुकी तो उस पर नानी ने गंगाजल छिड़का। ऐसा करते हुए मैंने सुना, ''जय-जय गंगे। पापनाशिनी। कलिमलहारिणी! शुद्धिप्रदायिनी!'' नानी ऐसा अस्फुट जाप कर रही थी।

हरी मामू बराण्डे में तख़त पर बैठे शेव बना रहे थे। मुझसे यह सब देखकर रहा न गया। मैं हरि मामू का मुँहलगा था। मैंने उनसे पूछा, ''क्या लछमिनियाँ इतनी गंदी है कि उसे छूने के बाद नहाना और गंगाजल छिड़कना पड़ता है?''

मामू ने जवाब दिया। ''हाँ।''

यद्यपि मैं अभी बच्चा था, तथापि मेरे हिसाब से लछमिनियाँ जवान थी और सुन्दर थी। फिर वह गंदी कैसे हो सकती है? अच्छा, क्योंकि वह दूसरों की टट्टी और नालियाँ साफ़ करती थी, इसलिए सफाई के दौरान गंदी मान ली जाती होगी-मैंने सोचा।

''तो अगर वह नहा-धोकर आए, तब भी....?'' मेरा अगला प्रश्न था।

''हाँ!'' हरी मामू रेजर से दाढ़ी बनाते रहे।

''अच्छे-अच्छे कपड़े पहन कर आए, तब भी?''

''अगर लिपस्टिक-पाउडर और सेंट लगाकर आए तब भी।'' मामू ने निर्णयात्मक स्वर में कहा। उनके हाथ का सेफ़्टीरेज़र शेव पर फिसलता रहा।

''क्यों?'' मैंने फिर पूछा।

''चलो, भागो यहाँ से।'' मामू झुंझला गए। उन्होंने सीधा कोई जवाब नहीं दिया।

पर मैं भागा नहीं, ''क्यों....क्यों??'' मैं अपना प्रश्न दोहराता रहा।

''क्योंकि वह अछूत है।'' इस बार तेज स्वर नानी का था।

''अछूत किसे कहते हैं?'' मैंने साहस करके पूछा। नानी ने कोई जवाब नहीं दिया। वह छड़ी टेकती हुई स्नानागार की ओर चली गई। इस पर मैं अपने हरी मामू, जिनका मैं दुलारा था, के पीछे फिर से पड़ गया।

''बताइए न मामू...बताइए न ...अछूत कौन होता है?''

हरि मामू स्वभाव से बड़े शालीन थे। वह बच्चों को डाँटते भी थे, तो हमेशा कृत्रिम रोष से। इस बार भी उन्होंने वैसा ही किया,

''मत करो....।'' अपनी धीर-गम्भीर आवाज़ में उन्होंने सधा-सधाया जुमला बोला, ''नहीं तो लगा देंगे।'' लगा देने से उनका तात्पर्य चपत रसीद करने से था, जो उन्होंने किसी बच्चे को जीवन-भर नहीं लगाई, फिर मुझे आदतन खामोश हो जाना पड़ा।.....क्रमशः

***

15, वैशाली एन्क्लेव, सेक्टर-9, इन्दिरा नगर, लखनऊ

अरुण शर्मा

जिसकी किस्मत काली है
कब उसकी दीवाली है?

चुनता रहता है काँटे
वो बागों का माली है

गोरी बैठी मन्दिर में
दिल आशा की थाली है

घूम रहा जो सड़कों पर
पेट अभी तक खाली है

मुझसे जीना सीख 'अरुण'
दुनिया देखी-भाली है

***

निदेशक भाषा एवं कला संस्कृति विभाग,
हिमाचल प्रदेश, 39-एस.डी.ए. कम्प्लेक्स,
कुसुम्पटी, शिमला, lac.dir@hp.gov.in

रणधीर प्रसाद गौड़ 'धीर'

हमारे ज़ब्ते सोज़े ग़म का है अंजाम आज़ादी
हमारे इज़्तिराबे शौक़ का है नाम आज़ादी

तेरी तस्वीर भी निकली अलम अंजाम आज़ादी
सहर की दिलकशी में क्यों है अक्से शाम आज़ादी

वही हस्ती के ग़म हैं ग़म में लाखों उलझने दिल की
मिला तेरी फ़िज़ाओं में न कुछ आराम आज़ादी

अभी तक ग़म की सूरत देखते हैं देखने वाले
अभी नाकाम है हर जज़्बए नाकाम आज़ादी

जो रहती होश की हद में तो रहती सुर्ख़रू होकर
मगर गफ़लत की हद में हो गई बदनाम आज़ादी

हमें भी 'धीर' ख़ुशियों की तमन्ना है सरे हस्ती
हमें भी वादये ख़ुश रंग का इक जाम आज़ादी

***

448, साहूकारा, बरेली,
मो. 09456078597

महावीर उत्तरांचली

जो व्यवस्था भ्रष्ट हो, फौरन बदलनी चाहिए
लोकशाही की नई, सूरत निकलनी चाहिए

मुफलिसों के हाल पर, आँसू बहाना व्यर्थ है
क्रोध की ज्वाला से अब, सत्ता पिघलनी चाहिए

इंकलाबी दौर को, तेज़ाब दो जज़्बात का
आग यह बदलाव की, हर वक्त जलनी चाहिए

रोटियाँ ईमान की, खाएँ सभी अब दोस्तो
दाल भ्रष्टाचार की, हरगिज न गलनी चाहिए

अम्न है नारा हमारा, लाल हैं हम विश्व के
बात यह हर शख्स के, मुँह से निकलनी चाहिए

बी-4679, पर्यटन विहार, वसुंधरा इन्क्लेव, नई
दिल्ली - 110096, मो. 9818150516
ईमेल : m-uttranchali@gmail-com

लक्ष्मी खन्ना 'सुमन'

ऐसी गुमसुम-सी हवाओं को जगाओ यारो
उनमें भर कर जुनूँ आँधी-सा बनाओ यारो

सूखकर रेत बनी है जो नदी फिर उसमें
गर्म एहसास के पानी को बहाओ यारो

रूबरू हो के किसी तल्ख-सी हकीकत के
झूठ के रुख से नकाबों को हटाओ यारो

करके आज़ाद चमकदार कफ़स से उसको
फिर से जज्बात के पंछी को उड़ाओ यारो

जो सदा साथ हवाओं के बहीं तकदीरें
उन्हें फिर जोश के पाँवों पे चलाओ यारो

आज उम्मीद को मिल जाये सहारा दिल का
आज सहरा में 'सुमन' फिर वो खिलाओ यारो

***

ए-20/4, फेस-1, डी.एस.एफ.सिटी,
गुडगाँव (हरियाणा)-122002

आँखें

-बद्री सिंह भाटिया

अस्पताल से बाहर निकलने के बाद एस.आर. शर्मा यानी सुखराम शर्मा एक क्षण के लिए ठिठका। उसने बसन्ती का हाथ पकड़ा और मालरोड़ की ओर बढ़ा। वह बसन्ती के इलाज के लिए शहर के जाने-माने अस्पताल आया था। बसन्ती को काफी दिनों से पेट में दर्द हो रहा था। खाना खाने के कुछ देर बाद कई बार उल्टियाँ हो जातीं। पहले घरेलू इलाज चलता रहा। उससे ठीक हो जाती थी, तो काम चल पड़ता था। दर्द के लिए अनेक प्रकार की दर्दनाशक दवाओं और जी मितलाने के लिए भी ऐसी ही अनेक दवाओं का बदल-बदल कर उपयोग होता रहा था। परन्तु जब दर्द बढ़ा तो फिर कस्बे के अस्पताल में एक्स-रे और बाद में अल्ट्रासाउंड से पता चला कि उसकी पित्त की थैली में स्टोन जमा हो गए हैं। बहुत ज्यादा हैं और उसका इलाज गुर्दे की पत्थरी की तरह कोल्थ आदि पत्थर गलाने वाली चीजों के प्रयोग से नहीं बल्कि ऑपरेशन से ही होगा। बसन्ती इसके लिए मुकर गई। "नहीं, ऑपरेशन नहीं। वह जिन्दगी के एक झटके से तो बच गई मगर अब दूसरा नहीं।" एस.आर. शर्मा उसे काफी समझाता रहा मगर वह टस से मस नहीं हुई। जीवन चलता रहा। इस बीच वह सरकारी सेवा से सेवानिवृत्त हो गाँव आ गया था। अब अस्पताल और भी ज्यादा दूर हो गया था। गाँव आकर बसन्ती के खान-पान में अन्तर आया और तकलीफ बढ़ने लगी। उसकी सौतन सुन्तली ने प्यार से समझाया कि वह ऑपरेशन करा ले। कुछ नहीं होता। यूँ दर्द सहना ठीक नहीं। उसने गाँव की दो-चार औरतों और मर्दों के नाम गिनाए-जिनके ऑपरेशन हुए हैं और कहा कि तू हिम्मत कर। मगर वह अपने दर्द लिए चेहरे के साथ उदास ही रहती।

बसन्ती असमंजस में। एक ओर तकलीफ दूसरी ओर डर। सौतन का सुझाव और पति का आग्रह। उसने अपनी एक और शंका सौतन को बताई-''दीदी यहाँ तो चल जाता है-मगर वहाँ अस्पताल में। मेरा अन्धापन आड़े नहीं आएगा क्या? कैसे इतने बड़े अस्पताल में? सुना है बड़े-बड़े हॉल होते हैं-जिनमें बीसियों मरीज होते हैं। मुझे तो सदैव सहारे की जरूरत रहेगी। फिर लोग बार-बार पूछेंगे कि ये अन्धापन? मैं अब उस याद से नहीं गुजरना चाहती। इन्होंने (पति) और आपने मेरे लिए बहुत किया है, पर उस दिन को याद नहीं करना चाहती और तू तो जानती है औरतें पूछने के बाद उन दिनों के बारे सुझाव देने लग जाती हैं जो बीत गए होते हैं। ऐसा करना था, वैसा करना था।

उसके ऑप्रेशन न कराने के डर का निदान एक दिन फौज से आए उसके बड़े बेटे ने कर दिया- कुछ नहीं होता माँ। तू चल मैं तेरे लिए स्पेशल वार्ड कर दूँगा। वहाँ कौन पूछेगा? उसको अपने बेटे पर पति से भी ज्यादा भरोसा था और वह तैयार हो गई। स्पेशल वार्ड का ध्यान एस. आर. शर्मा को भी नहीं आया था। कारण, एक औसत आय वाला आदमी यदि बड़ा हो भी जाए तो-आप समझ सकते हैं। इसलिए तय हुआ कि अगले शुक्रवार को दिखाएँगे। उस दिन अस्पताल में ज्यादा भीड़ नहीं होती। उसी दिन स्पेशल वार्ड की भी बात कर लेंगे।

समय बलवान होता है। दो दिन बाद एक एस.एम. एस. आया और बसन्ती के फौजी बेटे को वापस अपनी नौकरी पर जाना पड़ा। उसकी कम्पनी की ड्यूटी कहीं सीमा पर लगी थी। बसन्ती काफी रोई मगर कुछ नहीं हुआ। लड़का चला गया। उसकी पीड़ा को कम करते सौतन सुन्तली ने अपने लड़के को फोन किया-पता चला वह दुर्घटनाग्रस्त हुए ट्रक को देखने दूर गया है और फिर कई छोटी-बड़ी स्थितियों से गुजरते हुए आखिर में एस. आर. शर्मा स्वयं अस्पताल आ गया। ऑप्रेशन तो कराना ही था।

गेट पर से वे आगे बढ़े। बसन्ती ने अपना काला चश्मा ठीक किया और पूछा- "अब हम कहाँ जा रहे हैं?"

"अभी समय है, चलते हैं, एक चक्कर मॉल का लगाते हैं। उसके बाद सोचते हैं।"

"घर नहीं जाना?"

"नहीं! आज नहीं। डॉक्टर ने कहा है, स्पेशल वार्ड का कमरा कल तक खाली होगा।"

"तब रात को?"

"हाँ! यहीं भट्टी या वर्मा के मकान में रुक जाएँगे। कल यदि कमरा मिल गया तो परसों ऑपरेशन हो

जायेगा।"

"पर।"

"पर वर कुछ नहीं। वहाँ सब ठीक है। कमरे अलग हैं और लेट-बाथ (शौचालय) अटैच्ड हैं, फिर मैं साथ हूँ न। तुम घबराती ही बहुत हो। पहले तो।"

"पहले भी घबराती थी, मगर तुमने जो साथ दिया उससे डर काफी कम हुआ था। अब नया डर है। फिर नई जगह से भी तो ।"

"अच्छा चलो अब।"

"चलो।"

वे आगे बढ़े। चलते-चलते एक मोड़ पर कुछ आभास-सा पा, बसन्ती बोली- "कहाँ जैसे आए हम?"

"लक्कड़ बाजार क्रॉस कर रहे हैं।"

"अरे ! यहाँ का तो रूप बदल गया होगा। पहले-पहल एक बार आए थे हम। तब छोटू को लकड़ी की रेल ली थी। लकड़ी का घोड़ा। कितना खुश हुआ था वह।"

"हाँ! तू सम्भल कर चल। मेरे साथ सट कर। गाड़ियाँ बिना हॉर्न के भी चलती हैं-आगे से आने वाली से तो बच जाएँगे मगर पीछे वाली? कहीं रगड़ लग गई तो ये साले हॉर्न भी बिल्कुल समीप आकर ही देते हैं।"

"आज तू जो है साथ, बचा लेगा मुझे।' हँसी वह और उसकी बाजू जोर से पकड़ ली।

"अब तू वैसी पतली-सी नहीं रही जैसी पहले थी।"

''मतलब मैं मोटी हो गई हूँ।"

"नहीं पर काया में फर्क तो है। भारी भी हो गई है।"

''लोग क्या कहेंगे कि देखो बूढ़ों को, इस उम्र में भी।''

''मरने दे। तेरे को क्या, तू मेरे साथ है। पूछेंगे तो कह दूँगा। हम लवर हैं।'' हल्के हँसा वह। वह जानता है कि इसके ऐसे सवालों से कतई भी नाराज़ नहीं होना है। गप्पबाजी में वे आगे बढ़ गए। आगे वे चुप हो गए थे। रिज मैदान के पास आते वह ही बोली। शायद उसे घोड़ों का आभास हुआ हो या कुछ और ''रिज पर आ गये न हम?"

"हाँ!"

"एक-एक पूड़ी (चने की पुड़िया) लो, यहीं किनारे बैठते हैं। घड़ी भर रिज का नज़ारा देखते हैं।"

"नजारा!" चौंका एस.आर. शर्मा। अरे! यह क्या कह दिया? उसने तो शपथ ली थी कि वह कभी बसन्ती के अन्धेपन का एहसास नहीं कराएगा पर! यह बुरा मान जाएगी। दुःखी भी होगी, पर तीर कमान से निकल चुका था। वह आगे बढ़ा। पुड़िया ली और उसका हाथ पकड़ बैंच की ओर बढ़ गया। वह बोली- ''आप चुप क्यों हो गए? मैंने बुरा नहीं माना। जैसे पहले बताते थे अब भी बताना। मैं तुम्हारी आँखों से देखूँगी।'' और वह विगत में खो गई।

अस्पताल से छुट्टी हुई तो वह माँ के साथ बाहर निकली थी। आँखों पर बाहर की तेज रोशनी पड़ी पर आँखों पर लगी हरी पट्टी ने चुंधियाने से बचाने में सहयोग दिया। फिर भी कई दिनों तक अन्दर ही अन्दर रहने से आँखें मिचमिचा गईं। कैसी धूप होगी? उसने आँखें झपकाईं और धूप से सामंजस्य बिठाया। गर्दन नीची किए आगे बढ़ने लगी। भीतर डर, कहीं टक्कर न हो जाए। माँ का हाथ जोर से पकड़ लिया था। उसने मान लिया था कि अब वह कुछ भी नहीं देख सकती थी। आँखों में पूर्व का देखा सब कुछ वैसा ही था। मगर उसके बाद क्या हुआ? कैसे प्रकृति बदली उसे नहीं मालूम। अब जीवन ऐसे ही गुजारना होगा पुरानी स्मृतियों में दूसरों के कहे-सुने और बदलते मौसम के मिजाज से। जब ज्यादा गर्मी लगेगी, जब पानी की फुहारें छुएँगी, और जब शीत लगेगी तो तब वही सारे एहसास होते रहेंगे आज ऐसा दिन है, आज। मन ही मन सोचती, पिछले जन्म में उससे क्या गुनाह हुआ होगा जो जीवन का वह सुख छीन गया। वह मन ही मन उसे गाली देती रही जिसने उसे अन्धा बना दिया।

माँ के साथ आहिस्ता से आगे बढ़ी, डरी सी। बाहर की दुनिया की अभ्यस्त होने के लिए। इसी तरह की कुछ और कोशिशों के बाद वह गाँव आ गई थी। सभी पूछने आए। उसकी सहेलयाँ, बाद में रिश्तेदार। अनेक प्रश्न पूछते। सुझाव देते। वह अभी लोगों के प्रश्नों और सुझावों के बीच झूल ही रही थी कि उसके कर्नल चाचा ने एक दिन उसे बताया कि वह अब अन्धे-बहरों के आश्रम जाएगी। वहाँ कुछ काम सीखेगी उसी दिन एस.आर. शर्मा उनके घर आया था। डरता-डरता। साथ में पंचायत प्रधान और एक दो ग्राँवी (अपने गाँव के लोग) भी थे। उसने अपनी गलती के लिए अफसोस जताते हुए कहा था कि जो हो

गया वह तो हो गया। वह उसका गुनहगार है। अपनी गलती की सजा में वह इस लड़की से शादी करना चाहता है और उसके बाकी जीवन की जिम्मेवारी भी लेता है। उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा।

वह उसके प्रस्ताव पर बिफरी थी, बहुत बुरा भला कहा था और मुकर गई थी। उसके कर्नल चाचा ने भी इतना कहा था कि अभी तो इसका जीवन बनाना है ताकि यह आत्मनिर्भर बन कर रह सके। पराधीनता ठीक नहीं। दूसरे अभी यह अपने साथ हुई दुर्घटना के प्रभाव से उबर नहीं पा रही है। आपका प्रस्ताव हमारे पास है।

एक दिन माँ ने बताया था कि शर्मा को बहुत अफसोस है। उसने असपताल में आकर इलाज का सारा खर्च दिया है। हमारे मना करने पर भी। उस दिन भी ट्रेनिंग का खर्चा दे गया था और वह आश्रम में आ गई थी। वहाँ भी यह कितनी बार आया था। बस एक ही बात-''बसन्ती जो होना था, हो गया। मैंने जानबूझ कर ऐसा नहीं किया। अब आगे की सोच।" कितनी बार अपनी गलती के लिए पश्चाताप करता।

तभी वह कहती- "क्या सोचूँ आगे की? तूने जो करना था, कर दिया। अब क्या और अन्धेरा करूँ मैं?" तब वह अपनी बात दोहराता बसन्ती उसने यह जानबूझ कर नहीं किया। गलती से बन्दूक चल गई मगर वह उसे दुत्कारती और वह लौट जाता।

बसन्ती सोचती जा रही थी। अपना विगत। उसके कानों में शर्मा की बात नहीं पड़ी थी। बस पूड़ी से दाने निकालती और मुँह में डालती जाती। एक प्रक्रिया सी। सामने लोग पहले की तरह आ-जा रहे थे। यह आभास कई बार होता ऐसे ही पहले कभी भी आते-जाते होंगे। नव-दम्पति, पर्यटक, फोटो खिंचवाते लोग। बॉल खेलते बच्चे। भीख माँगती एक लंगड़ी औरत, पीठ पर बोझ उठाए गंतव्य की ओर जाते कश्मीरी कुली और कभी-कभार आते-जाते विदेशी पर्यटक। इधर वक्त के साथ बच्चों के खिलौने, गुब्बारे बेचने वाले भी चल रहे थे। झण्डा सा बनाए, डण्डे में लटकाए एक गुब्बारा बेचने वाला गुब्बारे में हवा भरता और आकाश की ओर उछालता-पींऽऽ की आवाज के साथ गुब्बारा पहले ऊपर जाता फिर नीचे आता। एस.आर. शर्मा ने पूछा-"ले चलें एक दो गुब्बारे, सोनू-मोनू को।" मगर उसकी बात का बसन्ती ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने देखा वह दूर टकटकी लगाए चबेना चबा रही है। एक प्रक्रिया मात्र। उसे अभी घड़ी भर पहले का कहा स्मरण हो आया-पछताया। 'उससे कैसे निकल गया, उसके अन्धेपन का अहसास कराता शब्द?' वह ग्लानि महसूस करने लगा। वही, स्वयं वह, उसके अंधेपन का जिम्मेवार। विगत एक बारगी उसकी आँखों के आगे से सरकने लगा।

उस दिन वह किसी घुरल, काकड़ की तलाश में प्रधान के साथ गया हुआ था। अभी साँझ पूरी नहीं हुई थी। उसने सोचा कि इस समय ये जंगली जानवर उस जगह से पानी पीने गुजरते हैं। वह पहले भी यहाँ एक दो मार चुका है। उस दिन उसने दूसरी जगह न जा कर वहीं आना उचित समझा। यूँ उस दिन शिकार पर जाने का उसका मन नहीं था-मगर प्रधान ने कहा था-''शर्मा जी, काफी दिन हो गए-'डलकी' (माँस) का इन्तजाम नहीं हुआ। मैं शहर गया था-कमाण्ड में एक दोस्त से अच्छी व्हिस्की लाया हूँ, बनाओ प्रोग्राम। उसने कुछ देर सोचा और बेमन से अपनी दुनाली उठा ली थी। मुर्गे और घुरल मारने वाले कार्टेज बैग में डाल लिए थे। वे निकल पड़े।

ढलान वाले रास्ते के समीप। एक डाली के नीचे लम्बी घास की हिलने का आभास हुआ। इसे पहले प्रधान ने देखा धीमें से बोला-"शर्मा जी, वहाँ घास के बीच कुछ हिल रहा है।" वह भी ठिठका, आभास लिया। दूरी काफी थी। बरसात में यूँ भी ऊँची घनी हरी घास के बीच कुछ देखना आसान नहीं होता। इतने में घास के बीच ऊपर उठता सिर दिखा, फिर वहीं गायब। डालियाँ हिलती रहीं। वे ठिठके रहे। बन्दूक भी साध ली थी। 'यार! कोई घास-वास काटने वाली न हो?' उसे शंका हुई थी। कमर झुकाए आगे बढ़ते भी रहे। नज़रे हिलती डालियों पर। कहीं शिकार भाग न जाए। एक जगह रुक गए। प्रधान ने फुसफुसाते कहा था, "यह घुरल है। ऐसी हरकत उसी की होती है। जोड़ा भी हो सकता है। काकड़ नहीं हो सकता। औरत होती तो कुछ गुनगुना रही होती। आप चलाओ गोली।"

इस बीच जानवर सी चीज का सिर दो-तीन बार ऊपर उठा। मगर वह घास से बाहर नहीं आ पा रहा था और तभी

प्रधान ने कहा-"करो फायर।" और धांय की आवाज़ के साथ एक पतली सी चीख भी उभरी और वातावरण में छा गई। एस.आर. शर्मा के मुख से एक दम निकला-"यार ये क्या करा दिया?" फिर हल्का सहज हो पीछे मुड़ा। मुड़ते कहा-"जा कर देख, कौन मर गया ये, मैं तो गया दूसरे गाँव। अब क्वाटर नहीं जाना। तूने मरवा दिया।"

दूर गाँव से एक आवाज उभरी ''क्या हुआ रेऽ?''

वह बहुत डर गया था उस दिन।

एस.आर. शर्मा को नौकरी में लगे अभी साल दो साल ही हुए थे। इस बीच उसने अपने जन सम्पर्क और लोगों के काम करके अच्छा नाम कमा लिया था। वह वहाँ से सामान्य रास्तों को छोड़ अन्य रास्तों से सीधा दूसरे गाँव के नम्बरदार के घर चला गया। नम्बरदार के आँगन में आवाज दी तो नम्बरदारनी बाहर आई-उसे देख बोली-"आओ भाई! लम्बरदार तो अभी नहीं आया। पर क्या बात? बन्दूक और कोई झोला-वोला नहीं, आप तो...?"

"नहीं बस यूँ ही निकला था। नीचे तक आया तो मन किया चलो ऊपर हो आता हूँ। पर चलता हूँ। कब तक आना है उन्होंने?" उसने अपने मन की धुकधुकी छिपाते हुए कहा।

"आते ही होंगे। आप बैठो। कुछ काम था।"

"हाँ। काम भी था, पर चलो ।"

"न, न। अब कहाँ चलो? रात होने को है। बरसात का मौसम है। रास्ते में तरह- तरह के जानवर मिलते हैं।"

वह अनमने से रुक गया। मगर भीतर दिल धड़क रहा था। उससे ऐसी गलती कैसे हो गई। वह लड़की की ही चीख थी। यदि कोई मर गई और प्रधान भी उस ओर हो गया तो बात बिगड़ जाएगी। नौकरी चली जाएगी। जाने कितनी जेल हो!

थोड़ी देर बाद नम्बरदार आया तो उसने उसे भीतर ले जा कर धड़कते दिल से सारा वृतान्त बताया। पिछवाड़े छिपाई बन्दूक और झोला उसके पास भीतर रखे और उसे अपने किए काण्ड की जाँच करने को कहा।

इधर गाँव में हल्ला पड़ गया। लोग चीख की ओर दौड़े। बसन्ती के पिता अपने प्लाट की ओर। प्रधान भी एक जगह छिपा था इसलिए वह भी आगे बढ़ा। देखा-बसन्ती है। चेहरा खून से लथपथ। उसने नाक के पास हाथ किया-साँस चल रही थी। एक ने तब तक नाड़ी देख ली थी, वे उसे उठाने लगे। हल्ले के बीच एक फैसला-शीघ्र अस्पताल ले चलो। कोई आवाज-यहीं पास में डिस्पेंसरी है। चलो। चलो यार देर न करो। तब तक कुछ लोगों ने एक पालकी सी बना दी और वे चल पड़े। सड़क तक आए-किसी गाड़ी की प्रतीक्षा। मगर कुछ नहीं दिखा। दूर से आती एक सफेद गाड़ी दिखी। कुछ इन्तजार के बाद पास आई, रुकी, स्थिति समझी तो एक उत्तर मिला, ''यह पुलिस केस है। मैं इस पचड़े में नहीं पड़ता।'' वह चला गया, फिर दूसरी की प्रतीक्षा। तभी एक ने बीच सड़क में खड़ा हो गाड़ी रुकवाई। भाग्य से खाली थी। उसने फटाफट बसन्ती को भीतर डाला-स्वयं बैठकर बोला-किसी तरह तहसील अस्पताल आओ। फिर चालक से बोला-"भइया, ये मर जाएगी। मदद कर और अस्पताल पहुँचा दे। तेरा नाम नहीं लूँगा।" खैर! अपनी व्यस्तता के बावजूद वह चल पड़ा। आगे बढ़े तो उसने पूछा- "क्या हुआ?"

"गन शॉट।"

"क्याऽऽ?"

"हाँ, मुआ वो सेवक आया हुआ है। उसको शिकार की लपोड़ (सनक) चढ़ी रहती है। परधान के साथ मिला हुआ है। बस उसी ने।"

"भइया, यह तो पुलिस का मामला है.....मैं.....?"

"आपको कुछ नहीं करना। तहसील अस्पताल पहुँचा दो। मैंने कहा ना, आपका नाम नहीं आएगा, चले जाना फिर हम स्वयं कर लेंगे। थाने में भी वहीं जाएँगे।"

दूसरे दिन नम्बरदार ने एस.आर. शर्मा को सारा वृतान्त बता दिया और गन अपने पास रख शाम को उसे गायब हो जाने को कहा। वह चला गया। मन में सन्तोष यह कि वह मरी नहीं। अब वह कुछ कर सकता है। जाने कितने विचार। कभी बदली करा कर दूर चले जाने का, कभी उसके इलाज का खर्चा वहन करने का। कभी कुछ, ऐसा ही जैसा कोई भी अपने को बचाने के लिए सोचता है। हर कोण से। एक सवाल भीतर उठता मगर लोगों के रोष का कैसे सामना करेगा। यदि वह उनको मिल गया तो जान नहीं बचेगी।

मामला ठण्डा पड़ा। उसने अपनी बदली दूसरी जगह

करा दी थी। उसने प्रधान के जरिए इलाज का खर्चा भिजवाया। किसी के घर लड़की की माँ को बुला उसके पैर पड़ा। अपनी जिम्मेदारी मान नाक रगड़ी

इधर मुकद्दमा चला। गवाहों की कमी के कारण वह सजा से बच गया। मगर एक अपराध बोध ने उसे जकड़ लिया। 'नहीं! वह उस लड़की का गुनहगार है।' वह परेशान रहने लगा। घर आता चुप रहता। जवान पत्नी पूछती-"तुम तो चहकते रहते थे। अब क्या हो गया। तुम अब शिकार को भी नहीं जाते। कितने दिन हो गए।" वह टाल जाता। उसके सवालों का जवाब नहीं दे पाता। कभी-कभी उठ कर कहीं चला जाता। परन्तु स्थिति रात को खराब होती-तब वह उसे झिड़क देता।

एक दिन उसने पूछ ही लिया-"कोई दूसरी है तो बताओ। यूँ क्यों?"

"नहीं कोई दूसरी नहीं है।''

''हर वक्त परेशान। घर के काम भी पहले की तरह नहीं करते और ये तुम्हारी सेहत भी गिर गई है। कोई तो कारण है न।" पत्नी के सवालों का क्या उत्तर दे। सोचता वह। ऐसी जाने कितनी बातें हुईं। मगर एस.आर. शर्मा की बेचैनी दूर नहीं हुई। मन ही मन तड़पता रहता। किसे बताए अपना दुःख? कि उसकी गलती से एक युवा लड़की अन्धी हो गई। क्या होगा उसके जीवन का? उसकी इस स्थिति से पत्नी परेशान। क्या करे। इधर एक बच्चा भी हो गया था। वह भी बड़ा हो रहा है। पत्नी ने सत्याग्रह कर दिया। एस.आर. शर्मा ने पूछा मगर कोई उत्तर नहीं और फिर वही आग्रह। उसने एस.आर. शर्मा के भीतर के सच को जानना चाहा। तब गहरी पीड़ा से बोला था- "सुन्तली, मेरी वजह से एक जिन्दगी तबाह हो गई। उसका क्या कसूर था। मेरे शिकार के शौक ने उसे अन्धा कर दिया।"

"पर, आपने तो उसके इलाज का खर्चा दे दिया था न? बाद में भी आप दे आए थे।"

"हाँ! मैं इससे उबर नहीं पा रहा। मैंने उसके चेहरे पर उदासी देखी है। इस बार गया तो ठीक से बोली नहीं। चुप स्वेटर बुनती रही। उसने वहाँ दस्तकारी के वे सारे काम सीख लिए हैं जो अन्धों को सिखाए जाते हैं। उसकी शादी की उम्र निकलती जा रही है, उसके भी तो अरमान होंगे। उसने सोचा होगा कि शादी के बाद वह क्या-क्या करेगी और अब? वहाँ की आया बता रही थी कि शाम के समय वह किनारे वाले बैंच पर बैठ चुप दूर आसमान निहारती रहती है। जब थक जाती है तो अपनी स्टिक के साथ नल तक जाती है। मुँह धोती रहती है, बड़ी देर तक। निराशा से घिरी।

"फिर आप क्या चाहते हैं?" पत्नी ने पूछा था।

"मैं सोचता हूँ ।" उसने मन की बात नहीं कही।

"बोलो न! यूँ जिज्ञासा क्यों बढ़ाते हो?"

"मैं चाहता हूँ उसे यहाँ ले आऊँ और उसकी सेवा करूँ। उसे वह सब कुछ दूँ जो उससे छीना गया है।"

"यानी..... ?"

"हाँ!"

"मेरी सौतन लाते आपको शर्म नहीं लगेगी। लोग क्या कहेंगे?" सुन्तली का दिल बहुत ज्यादा धड़कने लगा था।

"बस इसी उधेड़बुन में मैं मरता जा रहा हूँ। आजकल इन आश्रमों में जवान लड़कियों के साथ बहुत कुछ उलटा हो रहा है। यदि उसके साथ भी हुआ तो उसका दोषी वह मुझे मानेगी।"

"और यदि कुछ हो गया होगा तो आपको क्या पता?"

"पता नहीं पर मैं स्वयं को उसका दोषी मानता हूँ। मेरे भीतर वह बस गई है उसकी चीख कई बार सुनाई देती है। मुझे तब वह बरसात का मौसम, बन्दूक की धांय सुनाई देती है, मैं सो नहीं पाता।"

सुन्तली चुप रही। सोचती, एक ओर अपना जीवन। दूसरी ओर पति की चिन्ता। उसका बसन्ती के बारे में सोचते घुलते जाना। 'यदि इसे ही कुछ हो गया तो सुना है चिन्ता में रहने वाला आदमी..... ?' इस 'तो' का उसे उत्तर नहीं मिलता-और इसी तरह एक दिन सुन्तली ने कह दिया-"आप कचहरी में कागज बनवाओ। मैं अपना राजीनामा लिख कर दे दूँगी। आप उसका जीवन बनाओ। बल्कि मैं भी अब उसके जीवन के बारे में सोचने लगी हूँ। तुम जो भी कहोगे मैं करूँगी। ले आओ उसे। उसका जीवन हमारी जिम्मेवारी है, मैं आपको घुलते नहीं देख सकती।" रुआँसी उसने कह तो दिया मगर फिर सोचने लगी, "क्या वह कर पाएगी?" एक दूसरी औरत के साथ बाँट पायेगी वह अपना पति?' उसे कितनी बार नहीं का उत्तर मिला। फिर सोचती-वे भी तो मर्द हैं जो बिना बताए ऐसा करते हैं-फिर? तब भीतर से आवाज बार-बार आई और इसी

ऊहा-पोह में एक निर्णय- "हाँ! हाँ! करना पड़ता है, अपने लिए।'' और एक दिन वह बसन्ती के घर भी जाकर आई। कर्नल चाचा ने उनके प्रस्ताव को सहज स्वीकार कर लिया। बोले, ''तू जिम्मेवारी लेती है तो हम मान जाते हैं। पर..... ?''

वह बोली थी, ''आप चिन्ता न करो, मैं जो हूँ। आपने देख लेना। ये समझ लो कि वह मेरी छोटी बहन है।'' मन में विचार था, वह कहना चाहती थी कि वह अपने पति को बसन्ती की चिन्ता में घुलते नहीं देख सकती। पर नहीं कहा। वह मन की बात कहती भी कैसे? फिर चाचा ने बसन्ती के पिता को समझाया कि यही उसकी सजा है-हम बसन्ती का जीवन देखते रहेंगे। फिर कई शर्तों की पूर्ति। बसन्ती की न को हाँ में बदलने के प्रयोग हुए। होने वाली सौतन को भी मिलाया गया। वह उसके गले लग कर रोती रही। बोली-''तुम मेरी छोटी बहन बन कर रहोगी। ये वायदा रहा। ले प्रॉमिस।'' पत्नी की हाँ से एस. आर. शर्मा हैरान। उसने पूछा- ''सुन्तली, तूने ठीक से सोच भी लिया। तेरे मायके वाले, गाँव के लोग मेरी चिन्ता तो और भी बढ़ गई है। हम समाज का सामना कैसे करेंगे?'' उसकी चिन्ता का समाधान पत्नी ने कर दिया था, ''होगा तो बहुत कुछ। सब कहेंगे। मगर एक चिन्ता से निकलने और घुट-घुट कर मरने से बचने के लिए कुछ तो करना ही होगा। देख लेंगे। आप आगे बढ़ो।''

एक दिन बसन्ती एस.आर. शर्मा के घर में थी। तब तक उसने अपनी बदली निदेशालय में करा ली थी। बसन्ती को सुन्तली एक बड़ी बहन के रूप में ही मिली। उसने उसे घर के काम सिखाने शुरू कर दिए।

वह एस. आर. शर्मा के घर आ तो गई मगर उसे पति स्वीकार नहीं कर सकी। सप्ताहान्त पर वह आता तो ठीक से बात नहीं करती। वह उसके समीप आता तो दूर भागती, स्वीकार नहीं करती। वह भी चुप रहता। उसका हर ख़्याल रखने को कहता। तभी पहली पत्नी सुन्तली ने कहा-"इसे अपने साथ शहर ले जाओ। साथ रहोगे तो प्यार बढ़ेगा। अभी तो यह कहती है कि उसे मात्र अपने सुख के लिए लाया गया है, सब्जबाग दिखा कर। यह विवाह मेरी लाचारी का फायदा उठाने के लिए किया है यह अपने माँ-बाप को भी गाली देती है। वे उसका बोझ नहीं उठा सके।'' पत्नी की बात से वह विचलित हो गया था। फिर निर्णय, साथ रखना ही उचित रहेगा और वह उसे ले आया। शाम को दफ्तर से छुट्टी होते ही वह क्वाटर पहुँच जाता। उसे तैयार होने को कहता। मनाता। चलो घूम आते हैं। वह मना करती। वह मिन्नत करता। बार-बार कहता-''नहीं! कोई फायदा नहीं उठाएगा। बस अपने अपराध बोध से उबरने के लिए तेरे साथ तू समझ इसे।'' और कई बार की कोशिश के बाद एक दिन वह तैयार हो गई। "चलो! एक अन्धी को क्या दिखाना है?" उसने उसकी बात का उत्तर नहीं दिया। आगे बढ़ा तो ठण्डी सड़क पर आ गए। वहाँ से उसने उसका हाथ अपने साथ सटा कर पकड़ा। अपने साथ कदम मिलाने को कहा। उसे समझाया शहर है कैसे चलना है। वह जगह-जगह खड़ा हो जाता-उसे बताता- "बसन्ती वो देखो सामने तारा देवी की पहाड़ी है। एक किनारे पर माँ तारा का मन्दिर है। ये पहाड़ी लम्बी है। यहाँ से वहाँ तक। घने बान, देवदार के वृक्षों से अटी-पटी। बीच में से रेल की लाइन है।'' एक दिन वह ले चलेगा। वे रेल में भी सफर करेंगे। वह दूसरे पहाड़ दिखाता। उंगली से इंगित करता वो दूर पीछे की ओर फलाँ जगह से शुरू और फलां जगह खत्म। एक चित्र बनाता। कहता-बसन्ती तुम मेरी आँखों से देखो। पहाड़ तुमने देखे हैं-बस जैसे मैं बताता हूँ, देखती जाओ और दिल में उतारो। फिर किसी पुराने या नए बने भवन के सामने खड़ा हो उसे बताता। उसकी चित्रण करने की शैली बहुत रोचक थी। पहले वह सुनती, फिर मुस्कराती। आगे बढ़ती। वे माल पर चलते। वह बताता जाता। सामने से आ रहे लोगों से टक्कर न हो, उसे अपने से सटा कर बचाता। कॉफी हाउस में कॉफी पिलाता। बड़े, इडली खिलाता। कोई नहीं जान पाता कि वह अन्धी है। वैसे भी कॉफी हाऊस में किस को किस की फिक्र होती है। सब अपने में व्यस्त। यदि कोई देखता भी तो उसके काले चश्मे से अन्दाज लगाता कि आँख की कुछ गड़बड़ है। शायद कम दिखता हो, कोई गहरी दृष्टि से देखता तो बुदबुदाता-साले ऐसे में क्यों आते हैं कॉफी हाऊस? मगर उसकी आवाज़ की ओर कौन ध्यान देता, वे उठ जाते। वह सहारा दे उसे बाहर ले आता। उसकी इस क्रिया से वह कई बार ऊब सी जाती। चिढ़ उठती। कहती कुछ नहीं। बस यह लगता वह सोच रही है। जितना यह बता

रहा है, काश! वह वास्तव में देख पाती। मगर तब कुछ दिनों बाद उसने इस स्थिति के साथ सामंजस्य बिठा दिया। वह उन कहानियों में रुचि लेने लगी।

बसन्ती यादों के झरोखे से अपने विगत के दिन स्मरण कर रही थी-इसी तरह बैठती थी वह यहाँ के बैंच पर। जाने कितनी बार। शर्मा तब पुड़िया ले आता था। वे मजे से खाते और घर लौट जाते थे।

वह सोचती है-शहर आकर शर्मा ने कहा था-बसन्ती मैं तेरी मजबूरी का लाभ उठाने के लिए नहीं लाया हूँ। मैं अब काफी हल्का महसूस करता हूँ कि तेरे लिए कुछ कर पा रहा हूँ। मैं प्रायश्चित कर रहा हूँ। तुम माफ करोगी तो, शायद मैंने.....?'' इतनी सारी बातें। उसका अच्छा व्यवहार, उसे लगा वह उसी आँखें बन गया है। तब जाने कब उसके मन में एस.आर. शर्मा की ओर प्यार जाग गया। वह आदमी हत्यारा नहीं है अब वह उसके दफ्तर से आने की प्रतीक्षा करने लगी, बतियाने लगी थी। घर के काम भी समझने लगी थी। कहती-चुप यूँ ही बैठ कर कितना समय काटा जा सकता है। टी.वी. भी कितना सुना जा सकता है? उसकी वाणी में अन्तर आ गया था और इसी प्यार में वह एक दिन उसके बिस्तर में घुस गई थी। घुटकर प्यार किया था। ''हाँ! आपसे गलती हुई थी। आपने जानवर समझ फायर किया था-हाँ! मैं मर जाती यदि घास का पूला बाँधने थोड़ा नीचे न उतरती। हाँ! आपने मेरा चेहरा ठीक करा दिया वर्ना। ज्योति आप नहीं ला सकते थे।''

और परिणाम। वर्ष-वर्ष बाद दो बच्चे हुए। एक लड़का एक लड़की। सौतन के भी दो बच्चे थे। बच्चे बड़े होते रहे। ऐसे ही एक दिन गाँव में वह बच्चों के साथ बैठी थी। उसने बड़ी बेटी से पूछा- "मैं कैसी लगती हूँ?"

"छोटी माँ आप बहुत अच्छी हैं।"

"मेरा चेहरा!"

"बहुत ठीक। हाँ माथा जलने के कारण थोड़ा लाल है।"

"बुरा लगता है।"

"नहीं। यह तो घाट वाली शीतला वाली आन्टी से भी अच्छा है।"

"घाट वाली आन्टी।"

"वो राम की घर वाली। उसके भी तो दाग है। वह भी बचपन में चूल्हे में जा गिरी थी। उसका माथा जल गया था।"

"अरे! और मेरी आँखें?"

"वो ठीक हैं। साफ डेले हैं, मगर।"

"मगर....."

"आप देख नहीं पाती न।"

"नहीं, मैं देखती हूँ। देख सकती हूँ।"

"कैसे?"

"तुम्हारे पापा की आँखों से।

"अरे! वाह।"

चौंकी थी बेटी। यह क्या कहा छोटी माँ ने, वह उठ गई थी। उसने अपनी माँ को आवाज दी। मम्मी, छोटी माँ देख सकती हैं। उसकी आवाज से वह भी चौंकी थी। क्या कहा?

"क्या कहा?" उसने सवाल किया। एस.आर. शर्मा चौंका।

एस.आर.शर्मा अपनी सोच से बाहर आया। "मैं कह रहा था कि इस रिज पर जाने कितने लोग आते हैं। हर मौसम में, कितने पाँव। उस समय का गाँधी जी का बुत ऊँचा हो गया है। घोड़े वाले बढ़ गए हैं। लक्कड़ बाजार की ओर जाने वाले खनूर के पेड़ के नीचे अब बूढ़े पूड़ी वाले का बेटा बैठने लग गया है। इधर पार्क में डॉ. परमार का बुत लग गया है। तुझे याद है हम यहाँ पहले धूप सेंका करते थे। इस पार्क के किनारे जहाँ कभी बैण्ड बजा करता था, आशियाना रेस्टोरेन्ट है। इसके नीचे भी ऐसा ही है-गुफा होटल। उधर की ढलान को बचाने के लिए एक मार्किट बना दी गई है और ऊपर इंदिरा गाँधी का बुत लगा दिया गया है। उधर गेइटी थियेटर का नवनिर्माण पुरानी शैली में कर दिया गया है। इधर माल के रास्ते पर एक कुल्फी इत्यादि की दुकान खुल गई है। यहाँ के एक किनारे बैठने वाला वह अधेड़ व्यक्ति पूड़ी बेचता बूढ़ा हो गया है और ऊपर रखे बैंच में एक ग्लो लाइट लग गई है। इसमें कई बार खबरें, तापमान दिखाया जाता है। पीछे सड़क पर चाट वाले वैसे ही हैं, पहले जैसे। हाँ आदमी बदल गए हैं। चलो। तुम्हें सोफ्टी खिलाता हूँ।"

"चलो। बहुत दिन हुए। मैंने सोफ्टी नहीं खाई।"

"हाँ! मैंने भी नहीं।

"पर ये बताओ, कहीं इससे मेरी पत्थरी पर तो नहीं असर पड़ेगा।"

"पता नहीं। तू यह क्यों सोचती है। आज का स्वाद जाने कल हो या न हो।"

और वे आगे बढ़ गए। स्केण्डल प्वांइट पर पहुँचते ही जितने में वह कुछ कहता बसन्ती ने कहा, ''स्केण्डल प्वांइट आ गया।'' पति ने उसकी ओर देखा और हूँ की। बोली, मुड़ रहे हैं, कॉफी हाऊस नहीं जाना?'

''एक राऊँड लगा लेते हैं।''

''ठीक है, इस उम्र में क्या रह गया है राऊँड के लिए? बदल गया होगा सब कुछ।''

''हूँ, अब काफी बदल गया है, कितनी दुकानों में विदेशी माल बिकता है और बड़ी कम्पनियों ने शो-रूम ले लिए हैं। दुकानों के मालिक उनमें प्रबन्धक हो गए हैं।''

''मतलब?''

''बस बदलाव ही बदलाव। असल में बसन्ती जिन्दगी में एकसा क्या रहता है। समय के साथ बदलता जाता है। हम भी तो बूढ़े हो गए। मानो कल की बात हो।''

''हाँ, तुम तो वैसे ही हो, पहले जैसे।'' हँसी वह।

''मैं मॉल की बात कर रहा हूँ और तू...?'' हल्का हँसा वह भी।

''हाँ! यहीं हमने एक बार रेडियो भी खरीदा था।''

''हूँ! अब वह दुकान यहाँ नहीं है।''

''और घड़ी। क्या नाम कैमी .....?''

''हाँ, वह दुकान अब भी है।''

वे आगे बढ़ रहे थे। बसन्ती ने एक जगह रुककर कहा-''गेयटी थियेटर।''

''हाँ!''

''आगे चने वाली पोड़ियाँ है। कॉफी की छोड़ो छोले-भटूरे खाते हैं।''

''ठीक है।'' वे आगे बढ़े।

एस.आर.शर्मा खुश लग रहा था। वह बसन्ती का चेहरा देखता चेहरे पर दर्द के भाव नहीं थे। जाने कहाँ चला गया दर्द। उस समय बसन्ती उसका चेहरा निहार रही थी। इस जिज्ञासा में कि वह कुछ कहेगा। बताएगा।

मॉल रोड पर इसी तरह टहलते दो चक्कर लगाने के बाद वे चले गए। मॉल फिर दफ्तर के बाबुओं, सैलानियों ओर नव युवाओं से भरने लगा था।

***

2-हरबंस कॉटेज, संजौली,
शिमला-171006 मो.088946 81978

लघुकथा

कम्पनी -डॉ. करुणा पाण्डेय

मैं अपनी दोस्त शुभा के पास मुम्बई गयी थी, उसकी बेटी नेहा भी वहाँ थी। मैंने पूछा, ''कहो बेटा कैसी हो?''

वह तपाक से बोली ''मौसी बिलकुल ठीक हूँ। पता है, मैं सुबोध के साथ शादी करने जा रही हूँ, आप आयेंगी न शादी में मौसी?''

''शादी? यह क्या कह रही हो तुम? तुम्हारी शादी तो हो चुकी है।'' मैंने कहा।

''हाँ, हो चुकी थी, पिछले महीने मैंने राजन से तलाक ले लिया है और अब सुबोध के साथ शादी कर रही हूँ मौसी।" नेहा के चेहरे पर चमक थी।

''पर बेटा शादी के सम्बन्ध निभाने के लिए बनाए जाते हैं, तोड़ने के लिए नहीं बनते हैं। तुमको ऐसा नहीं करना चाहिए था। शादी करना और तोड़ना कोई बच्चों का खेल नहीं है। ये कदम तुम्हारा गलत है, अभी भी सोच लो।''

''मौसी ये सब पुरानी बातें हैं। मैं इन पर विश्वास नहीं करती हूँ। अच्छा मौसी, पिछली बार आप जब आई थी और मैंने आपको बताया था कि मैंने अपनी पुरानी कम्पनी छोड़कर दूसरी कम्पनी ज्वाईन कर ली है, क्योंकि इसमें पैकेज भी अच्छा है और आगे प्रमोशन के अवसर भी हैं, तो आप बहुत खुश हुई थी और आपने आशीर्वाद दिया था कि इसी तरह आगे बढ़ो और ऊँचाईयों तक पहुँचो, पर आज इतना नाराज़ क्यों? मुझे सुबोध की कम्पनी राजन से ज्यादा अच्छी लगी और सुबोध मेरी ही कम्पनी का सी.ई.ओ. है। मुझे भविष्य में और आगे बढ़ने के अवसर मिलेंगें, तो गलत क्या है? पहले भी कम्पनी बदली थी अब भी कम्पनी बदल रही हूँ।'' नेहा कहती चली जा रही थी और मैं सोच रही थी कि हम किस विकास की तरफ जा रहे है? बदलते परिवेश में रिश्ते किस मोड़ पर आ गए है?

*** 11 बी ,गुरुबक्श विहार कालोनी
निकट दक्ष बालाजी हॉस्पिटल (कनखल)
हरिद्वार 249408 (उत्तराखण्ड) मो.09897501069

देश की पुकार

अबहीं तुम पेट भरे प्रिय हो,
अब देश तुम्हें है पुकार रहा।
तुम अन्न यहाँ का सदा ही भखे,
उस कर्ज को याद दिलाय रहा।।
वह वायु सदा तुमको है दिया,
और आज तुम्हें हरषाय रहा।
परप्रेम में धन्य बने हो सखा,
पर प्रेम स्वदेश बताय रहा।।
तुम ज्ञान निधान जवान महा,
अरू शान के बान चलाओ सदा।
उस नैन की चैन बेचैन करो,
अरि दृष्टि को खूब सताओ सदा।।
यह देश स्वदेश विशेष बने,
सब अर्पण कर इतराओ सदा।
तुम बार हजार प्रचार करो,
हर बारहिं प्राण लुटाओ सदा।।

●

कविता में हिन्दी की गति

गीतों में बंद नहीं, कहीं दिखे छंद नहीं,
हिन्दी को बढ़ाने हित, सब करें बात है।
लय का प्रलय हुआ, यतिगति लुप्त हुयी,
लगता है जैसे कोई अच्छी चली घात है।।
तुक की नाराज़ी से भाव बेतुका जो हुआ,
नहिं आता देखने में कहीं अंलकार है।
प्रज्ञातत्व रस और छंद अवरुद्ध हुआ,
कहते हैं नया-नया होता चमत्कार है।।
कविता के हित मैं चराग माँगता हूँ दान,
संग संग संग सब गान कर लीजिये।
रस छंद यतिगति लय मत त्याग करें,
कवि के हृदय की पहचान कर लीजिये।।
भावों की प्रवर्षा करे, मन में जो हर्ष भरे,
कितनी सलोनी प्यारी हिन्दी मेरी भाषा है।
नित नित नित नव नूतन विकास करे,
'नन्द' के तो मन की यह प्यारी अभिलाषा है।।

●

हमारा देश

देश हमारा सब देशों में,
कितना प्यारा प्यारा है।
इसीलिये तो पूजित सबसे,
प्यारा देश हमारा है।।
पपिहा पी पी यहाँ पुकारे,
कू कू कोयल गाती है।
देव यहाँ पर जन्म को आतुर,
यह ही धरती भाती है।
यही भरत की जन्म भूमि है,
कर्मस्थान हमारा है।। इसीलिये तो.....

ज्ञान और अध्यात्म की बातें,
जन्म यहीं से लेती हैं,
सुर का सुर असुरों का नाशक,
ज्ञान ये हमको देती हैं,
दूध और गंगाजल सबको,
अमृत सम ही प्यारा है।। इसीलिये तो....
देवों अस पूजित है बंदर,
केकी हंस औ नाग यहाँ,
देव यहाँ पर वृक्ष,
अतिथि, जल, भिक्षुक, रवि, शशि, आग यहाँ,
यहाँ सभी सम्मानित होते,
मन तन प्राण हमारा है।। इसीलिये तो.....

●

राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय बिरिया
मझौला, (खटीमा), जिला ऊधमसिंह नगर,
(उत्तराखण्ड) मो. 9410161626

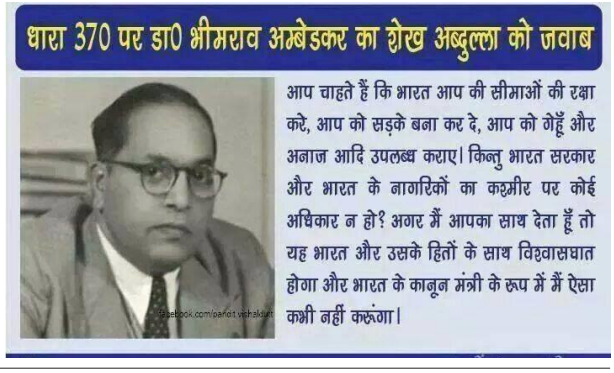

धर्मराज का कुत्ता–आशुतोष गुप्त

तुम आज़ाद हो,
वो सब करने को,
जो तुम चाहते हो करना,
चाहते हो जहाँ जाना,
जो पाना, जो पढ़ना,
जो कहना, जो गढ़ना !

कि आज़ाद हो तुम,
जाओ मस्जिद, मन्दिर या गिरजा,
आज़ाद हो कि,
पढ़ो बाइबिल, कुरान या गीता,

मगर एतराज़ है,
कि जब तुम,
तिलक इसलिए लगाते हो कि,
संजय से 'समूह' बन सको,
टोपी इसलिए लगाते हो कि,
हामिद से 'हुजूम' बन सको,
तो मुझ से बावरे का दिल,
धार धार रोता है,

फिरंगी साज़िश का शिकार
हिन्दुस्तान, फिर एक बार,
टुकड़े टुकड़े होता है !

बस आरज़ू यही, इतनी इल्तिजा है,
अपनी इबादत के तरीके,
अपने घरों तक रहने दो !
अपनी रगों में दौड़ते हिन्दुस्तानी लहू को,
'जय हिन्द' कहने दो !

मुझे न स्वर्ग का स्वप्न है,
न दोज़ख का ख़ौफ,
मैं कुत्ता हूँ धर्मराज का,
या कहिये 'वॉच डाग'
मैं निगहबाँ हूँ,
तुम्हारे,
चाल चलन का हिसाब रखता हूँ,
मैं कलमकार, कलम धारदार रखता हूँ।

–117, नार्थ सिटी,पीलीभीत रोड
बरेली– 243002, फोन 07351605555
journalistashutosh@gmail-com

बाप की तलाश–रजनी शर्मा

उस शख़्स के भीतर खोजती वह
अपने बाप को,
अगणित कोशिशों पर भी
रही असमर्थ वह
न जाने वह
न जाने कितनी ही बार
भूलती,
भटकती राहों पर....
कंधा न पाया
उसने फिर भी
खोजती वह अपने बाप को
वक्त बहता गया तटिनी की भाँति
आदत–सी बन गई
अनाप–शनाप की।

उसका बाप जो था न बाप,
शब्द तलवार के मंद वार से
कचोटते, घाव करते गहरे, हृदय पर
उस शख़्स के भीतर खोजती वह
अपने बाप को
मजबूत मन था उसका,
प्यार न मिला बेटी–सा
फिर भी रही ताकती,
ढूँढ़ती, तलाशती
अपने बाप को आलय के शख़्स में।
राहें लम्बी, जरूरत भी थी उसे,
विडम्बना है, तरु थे खाली
निरंतरता के उपरांत ही जाना उसने,
बाप तो है
पर बेटों का बाप.....
आकांक्षाओं का हुआ अंत
खोज हुई समाप्त.....

–हाउस नं. डी./74, लेन नम्बर–5,अप्पर शिव नगर, जम्मू

मोक्ष क्यों ? -मुरलीधर वैष्णव

जिस पल
मेरी माँ ने अंतिम साँस ली
ठीक उसी पल,
मेरी बेटी ने जन्म दिया
एक बेटी को।
मेरी एक आँख में
माज़ी के आँसू
तो दूसरी में
भविष्य के मोरपंखी सपने
छलक रहे थे
अपने ही इन दृश्यों का
साक्षी बना था मैं
और मुझमें कुछ
प्रश्न सुलग रहे थे
अनंतकाल के इस अंतहीन चक्र में
माँ की यह कौन सी मृत्यु थी ?
नवागंतुक नाती का
यह कौन सा जन्म है ?
सोचता हूँ
जन्म चक्र से मुक्ति की
भला कोई क्यों पाले चाह ?
क्यों वंचित रहें हम
माँ के दुलार से
पत्नी के प्यार से
बहन के अनुराग से
पिता के आशीर्वाद से
दिव्य शैशव से मिलते
निर्मल आनंद से ?
मोक्ष मिल गया तो
कौन बोएगा धान खेतों में ?
कौन गाएगा गीत
कमली के गौने पर?
कौन अंधी बुआ को
सड़क पार कराएगा ?
कौन बाबा को
कंधा देने आएगा ?
कौन निकालेगा
रथ यात्रा और ताजिये
और कौन खाएगा बीकानेर के भुजियें ?
इस प्यारी धरती के वासी हम
अच्छा है
आते जाते रहें यहाँ
प्रेम से मिलते बिछुड़ते रहें
और स्वर्ग बनाते रहें यहीं इसी धरती पर
-0-0-0-0-

ए-77, रामेश्वर नगर बासनी प्रथम
जोधपुर-342005 मो.09460776100

प्रतिरोध - संध्या सिंह

जब जब तुम मेरे मस्तक की लकीरों में
गुलामी लिखोगे
तब तब मैं अपनी हाथ की रेखाओं में
आज़ादी कुरेदूँगी
जब जब तुम मेरी आँखों के नाम
सैलाब लिखोगे
तब तब मैं मुस्कान के बागीचे
अधरों के नाम करूँगी
मुझे नहीं बहना
तुम्हारी बनायी ढलान पर
पानी की तरह
मैं खुद को समेट कर बर्फ हो जाऊँगी
और टिकी रहूँगी
पर्वत के शिखर के जरा से हिस्से पर
जिसमें गड़ी रहेगी
समझौतों से बीच से बच कर आयी
मेरी ज़िद की पताका ...
जहाँ नहीं उगेगा
कोहरे को चीर कर
तुम्हारी साजिश का कोई सूरज
मुझे पिघलाने के लिए ....!

***

डी.-1225, इंदिरा नगर, लखनऊ
मो. 07388178459
sandhya.20july@gmail.com

अभिलाषा-मंजू पाण्डे 'उदिता'

नहीं चाहिए वह ऊँचाई कि मैं,
नितान्त अकेली रह जाऊँ
हिमालय की ऊँचाई,
महानता नहीं
उसकी विवशता और मजबूरी है।
नहीं चाहिए अन्तहीन सागर-सी
अनन्त गहराई कि गर्त में,
सारे रहस्य ही समा जायें
पर्त-दर-पर्त जीवन के निशान ही
कई तहों में दब जायें

चक्रवात, झंझावात, आँधी या
तूफान-से तीव्रतम जीवन-प्रवाह की
उत्कंठा भी नहीं बुलाती
मुझे कभी अपने पास,
मैं डरती हूँ प्रलय से
नाश और महाविनाश की
ताण्डव लीला-सी विभीषिकाओं से
प्रचण्ड रवि के ताप-सा तेज
या अग्नि की ज्वाला का वेग

महत्वहीन है मेरे लिए
वह अस्तित्व जिसे यूँ ही
नकार दे यह संसार
उसे चाह कर मैं क्या करूँगी?
मैं तो ढूँढ़ती हूँ प्राण
जीवन की विलुप्त होती पदचाप,
अक्षम, शिथिल, जर्जर देह में
मद्धिम श्वांस की धड़कन
पाषाण बने मुट्ठी-भर हृदय में,

किसी बूढ़े के भावहीन चेहरे
या मिट्टी में सने निर्विकार
बालक की मासूम आँखों में
सपने साकार करने की
एक अनोखी छटपटाती उत्कंठा
है मेरे अन्तर्मन में
मुझे दे वह शक्ति, कि पढ़ सकूँ
किसी गूंगे का चेहरा
मिटा सकूँ किसी अबला का
संताप उसकी अथक पीड़ा

बन जाऊँ किसी आँख की ज्योति
किसी अपंग की बैसाखी
और जी जाऊँ इन सबके बीच
इन सबकी ही जिन्दगी।
इस एक जीवन में कई जीवन
जीने की चाह पूरी कर दो
प्रभु अनन्त ऊँचाई अनन्त गहराई
अनन्त ताप, अनन्त वेग मुझे मत दो।

***

-ए./28, जज फार्म, छोटी मुखानी
हल्द्वानी (नैनीताल), मो. 9536510501

स्निग्ध एकांत

-किशोर कुमार खोरेंद्र

छिटकी है चाँदनी ,खुशानुमा हैं नजारे
तुम्हारी आँखों के उनमेष सा चमक रहे तारे
चंदन सा महक रहे जंगल के वृक्ष सारे
ठहरी सी लग रही सूनी राह इंतजार में हमारे
पत्तियों ने लिखे है खत नाम तुम्हारे
फूलों के भीतर सेज बिछी है
आओ रात यही गुजारें.....
सपनो की गलियों को यही तक दो आने
निस्तब्ध घाटियों का मौन तुम्हें ही पुकारे
निमिष भर में युगों को जीना चाहती है
शबनम की हर बूँद, धुन्ध की बाँहों के सहारे
इस स्निग्ध एकांत में तुम्हारी यादों को बो दूँ
इस धरती पर फीर रही है जो मारे मारे.....

***

टी.-58, से.-1 एक्सटेन्शन, अवंती
विहार, तेली बंधा, रायपुर
मो. 07724012324

कवि

-वीरेन्द्र शर्मा

राष्ट्र की पहचान है कवि,
चेतना की जान है कवि
जो अलौकिक को करे लौकिक
कराए कौन-सी पहचान है कवि?

लोक की आवाज़ है कवि,
सरगमों का साज़ है कवि
आइना युग का बने वो
हर हृदय का राज़ है कवि।

देखकर अन्याय को
धरता कलम पर धार है कवि
जो न देखा हो कभी
अचरज दिखाता वो सभी

सूर्य पश्चिम से उगाए
आग पानी में लगाए
पथ प्रदर्शक राष्ट्र का
प्रहरी बना भाता है कवि

कभी नास्तिक, कभी आस्तिक
डूबता बहता है कवि
निज देश की संसार में
वह नित निखारे सौम्य छवि।

कल्पना रचती सदा ही
ग्रन्थ कितने विश्व मोही
पग कुपथ पर क्यों बढ़े
कर सचेत रहा सदा ही।

***

रामपुर बुशहर, जिला शिमला (हि.प्र.)
09459977143, 09129395440
ईमेल.solutionwithme@yahoo.com

अब कलम की हाथ में शमशीर होनी चाहिए।

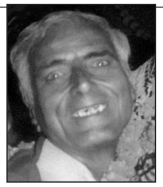

-स्व. केवल कृष्ण ठल

सिर्फ हंगामें खड़े करने से, कर रहा मजबूर है हमको
हासिल कुछ नहीं, तुम्हारा ये जुनून,
कुछ नयी तामीर की, अब कलम की हाथ में
कोशिश भी करनी चाहिए। शमशीर होनी चाहिए।

किस तरह राहत मिले, है कहीं कोई सदाकत,
हर आदमी को सोचिए, तो अहम् ये मरहला,
हर बशर की जिन्दगी, क्योंकि सच्चाई की संग
बेहतर गुज़रनी चाहिए। ताकत तो होनी चाहिये।

आपने जब ये लगाई यह समझ लो आलमो,
आग है, तो सोचिए, हुक्काम भी है आदमी,
ये लड़ाई भी तो उनकी भी मजबूरियाँ
बेमानी न होनी चाहिए। हमको समझनी चाहिए।

आँधियाँ बेशक उठाओ, चोट हमको किस जगह
रोंद दो जुल्मों सितम, करनी है, सोचो तो ज़रा,
साथ में लेकिन तुम्हारे, है सियासत जड़ में इसकी,
ख़ाल्क होनी चाहिए। जड़ उखड़नी चाहिए।

जिस तरह की आग में, ''ढल'' न जाएं अम्न के
जल जाएं अपनी बस्तियाँ, गुम्बद कहीं इस आँच में,
कोई तो कोशिश करे, इस तरह की यार अब,
वो आग बुझनी चाहिए। हरकत न होनी चाहिए।

***

1.पेड़ से गिरे पत्तों का दर्द कोई नहीं सुनता,
वक्त से गिरे लम्हों को कोई नहीं चुनता,
किसको है फुर्सत यहाँ पराया दर्द लेने का,
जब अपनों का दर्द अपना ही नहीं सुनता।।

मनोज कामदेव
गाजियाबाद (यू.पी.)
09818750159

*** ——— *** ——— ***

सखी री! –शिखा श्याम राणा

तुम चाहती हो सुनना
प्रथम अहसास प्यार का
परन्तु कुछ प्रथम हो तो
मैं कुछ लिखूँ
मुझे तो हर पल
हो जाता है प्यार
कभी आँगन में खड़े
अमरूद की डाल पर बैठी
नन्हीं –सी चिड़िया से

कभी पड़ोसी की
नन्हीं–सी बिटिया से
कभी पार्क में उड़ती
नन्हीं–नन्हीं तितलियों से

कभी पति की
थकान से
तो कभी बेटे की
निश्छल मुस्कान से

और हद तो ये
कभी अनायास ही
राह चलती या चलते
किसी अनजान से
कभी किसी की
मीठी मुस्कान से

अब तुम ही कहो,
प्रथम कहाँ रहा
ये अहसास?
मेरे दिल में तो हर वक्त
खिला रहता है
ये उपवन।

***

–1026, फस्ट फ्लोर, सै.–9,
पंचकूला, फो. 0172–505709

कॉफी में शुगर क्यूब–सी

–निरुपमा अग्रवाल

कॉफी की प्याली में शुगर क्यूब–सी मैं
घुलती रही तुम्हारी हथेली में
हर घूँट के साथ उतरती रही
पल–पल तुम्हारे अन्दर उष्मा–सी
वह पल बस मेरा था।
तुम सामने थे
तिरते गए कितने ही
स्पन्दित प्रतिबिम्ब
तुम्हारी आँखों में।
मौन होकर भी मुखरित हो उठी
अपनी साँसों में
तुम्हारे स्पन्दन–सी
वह पल बस मेरा था
बाहों के बंधन में स्नेहिल स्पर्श
लिखते अधर नेह निबंध
पिघलती मैं,
कॉफी में शुगर क्यूब–सी विलय होती
वह पल कब मेरा था?
पतझर की हवाओं में
सूखे पत्तों–सी दिशाहीन
कॉफी की खाली प्याली–सी
अस्तित्वहीन,
लौटा दो वह पल अपने स्नेह के साथ
उस पर अधिकार बस मेरा था
बस मेरा.....

***

–26, प्रभात नगर, पीलीभीत रोड, बरेली
मो. 9412463533

डा. सरोजनी प्रीतम: एक अनोखे व्यक्तित्व की स्वामिनी

-शशि श्रीवास्तव

डॉ. सरोजनी प्रीतम एक ऐसी शख्सियत का नाम है जिन्होंने इकलौती व पहली महिला व्यंग्यकार के रूप में न केवल देश-विदेश में अपनी पहचान बनाई अपितु कई दशकों से उसे लगातार बनाए भी रखा है। विपरीत परिस्थितियों में भी सहज रहने वाले एक बड़े परिवार में पली-बढ़ी डॉ. प्रीतम को बेशक घर-परिवार से पर्याप्त प्रोत्साहन मिला हो परन्तु उन्होंने अपनी मंज़िल खुद चुनी और उस तक पहुँचने का रास्ता भी खुद ही तैयार किया। आपने दिल्ली विश्वविद्यालय से एमए करने के पश्चात् स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नगर जीवन विषय पर पीएचडी की उपाधि प्राप्त की। आपने 11 वर्ष की अवस्था से ही प्रकृति को कथ्य मानकर लिखा फिर हास्य-व्यंग्य की रचनाएँ प्रवाहमान हुईं और गद्य एवं पद्य दोनों में व्यंग्य व वेदना के स्वर समान रूप से मुखरित हुए। आपने अपनी रचनाओं के माध्यम से हंसिका नाम की एक नयी विधा को जन्म दिया, जिसका अनुवाद देश की विभिन्न भाषाओं में भी हुआ। इस तरह आपकी रचनाओं का एक अलग अनूठा संसार है, जिसे पाठकों और श्रोताओं द्वारा निरन्तर पसंद किया जाता रहा है। देश की विभिन्न ख्याति प्राप्त पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने के साथ ही आपने रेडियो, टेलिविजन और फिल्मों के लिए भी लगातार लेखन और अन्य महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। विभिन्न मंत्रालयों द्वारा आपकी पुस्तकों पर टीवी धारावाहिक और फिल्मों का निर्माण किया गया है। अनेक वृत्तचित्रों और धारावाहिकों का निर्माण आपने स्वयं भी किया है। इनमें सैनिक की बेटी, बिके हुए लोग, सहारा दो, इन्हें अपनाओ, बेटी भी है वरदान, मैं नहीं जानती दहेज क्या है, सुना बहुरानी, आफत के पुतले, देश की शान है बेटी एवं खतरा है जी आदि प्रमुख रूप से

शामिल हैं। इन सभी कार्यक्रमों आदि के माध्यम से आपने विभिन्न सामाजिक विसंगतियों पर चोट करते हुए लोगों को उनसे बचकर चलने का आवाहन किया है। महिलाओं को जागरूक कर उन्हें उनके अधिकारों से अवगत कराते हुए उन्हें सम्मान देना, आपके लेखन और कार्यक्रमों का विशेष ध्येय रहा है। आपने संपूर्ण भारत में ही नहीं अपितु यूरोप, पूर्वी अफ्रीका, लन्दन, नार्वे, डेनमार्क, अमरीका आदि अनेक देशों में भी हास्य व्यंग्य का जादू फैलाया है। प्रभावशाली हंसिकाओं के समान ही अत्यन्त हृदयस्पर्शी काव्यात्मक संवेदना से पूर्ण करुणा भी आपके लेखन को चिरस्थाई बनाने में सक्षम है। माननीय डॉ. अब्दुल कलाम सहित देश-विदेश की ख्याति प्राप्त हस्तियों ने आपकी कला की सराहना करते हुए आपको गौरव के क्षण प्रदान किए हैं। इस प्रकार आपको विभिन्न साहित्यिक, सांस्कृतिक व सामाजिक सेवाओं व उपलब्धियों के लिए देश-विदेश में अनेक सम्मान भी प्राप्त हुए हैं।

अंत में मैं यहाँ यह भी कहना चाहूँगी कि आप जितनी प्रतिभाशाली और ख्याति प्राप्त हैं उतनी ही सरल, सहज व अभिमान रहित महिला भी हैं। यही वजह है कि जब हमने आपसे बातचीत का समय माँगा तो आपने तमाम व्यस्तताओं के बावजूद सहज ही हमारे लिए समय निकाल लिया। आशा है, पाठकगण देश की ऐसी शख्सियत से मिलकर काफी कुछ सीखने का अवसर अवश्य पाएंगे।

आपका पता है:-सी-111, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली-110060 फो011-42411831,9810398662

.....

शशि–आप देश की एक ऐसी महिला हैं जिन्हें व्यंग्य के क्षेत्र में सर्वाधिक प्रसिद्धि मिली है, इसका श्रेय किसे जाता है। इन सबके लिए आपको किस–किसने प्रोत्साहित किया?

डॉ. प्रीतम-इसका श्रेय मुझे खुद को जाता है। मेरे पिता जी वकील थे और माँ एक तरह से सटायरिस्ट कही जा सकती हैं। हमारा बड़ा परिवार था। स्थितियों को गम्भीरता से लेना तथा हँसी में टालना यह मेरे माता-पिता और

परिवार के लोगों की ही देन है, किसी साहित्यकार की नहीं। कोई महिला कितना ही दावा करे कि उसने फलाँ गुरू के आशीर्वाद से लिखना शुरू किया पर कई बार यही आशीर्वाद अभिशाप बन जाता है।

शशि- आप इस क्षेत्र में कैसे आईं?

डॉ. प्रीतम : बचपन में मुझे पता नहीं था कि व्यंग्य किसे कहते हैं लेकिन हंसी-हंसी में किसी को कुछ कह दिया और वह उसे तीर की तरह चुभ गया तो वह अपने आपमें व्यंग्य बन गया। इसके लिए मैंने कोई प्रयास नहीं किया।

शशि– मतलब कि आपको इसके लिए पर्याप्त अवसर भी मिला?

डॉ. प्रीतम : जी हाँ! शायद यह मेरे घर की सबसे बड़ी देन है कि मेरे माँ-बाप, भैया, भाभियाँ सबने मेरा साथ दिया और सच् कहूँ तो किसी भी लड़की को ऐसा वातावरण मिलता है तो उसकी हर कला पनप सकती है। महिलाओं के संदर्भ में मैं विशेष रूप से जो एक कमी पा रही हूँ वह यह है कि उनको थोड़ा बड़ा होते ही रसोई घर में चौकी, बेलन थमा दिया जाता है। इससे उनकी प्रतिभा कुंठित होकर रह जाती है। और वह घर की चाहरदीवारी में ही कैद होकर रह जाती हैं।

शशि– महिलाओं के आगे बढ़ने में और भी तो अड़चनें हैं?

डॉ.प्रीतम: निश्चय ही अड़चनें तो आज कदम-कदम पर आ खड़ी होती हैं। इन अड़चनों से व्यक्ति ठोकर खाकर गिर जाए, इससे बेहतर है कि वह संभल कर उस सबको झेल ले। लोग कहते हैं कि राम के स्पर्श से शिला अहिल्या हो गई थीं परन्तु आजकल तो ऐसे-ऐसे आयाराम और गयाराम आ गये हैं जो अपने स्पर्श से अहिल्या को भी शिला बनाने देते हैं।

शशि–आज महिलाएँ हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही हैं, महिलाओं के संबंध में पहले और आज के दौर में आप क्या फर्क पाती हैं?

डॉ. प्रीतम : प्राचीन महिलाएँ केवल विदुशी हुआ करती थीं परन्तु आज की महिलाएँ आलराउण्डर हैं। वह केवल विद्वान ही नहीं, विदुषी ही नहीं हैं बल्कि उनमें हर तरह की प्रतिभा हैं।

शशि–पश्चिम की तरह अब अपने देश में भी मानवीय मूल्यों का पतन होता जा रहा है?

डॉ. प्रीतम: मुझे ऐसा सोचना ठीक नहीं लगता कि हम पश्चिमी सभ्यता में ढलते जा रहे हैं। आप पश्चिम में जाकर देखिए। मैं तो देश-विदेश गयी हूँ, वहाँ पर मैंने जीवन के मूल्य देखे हैं। वहाँ पर आपको एक ही व्यक्ति के साथ जीने वाली और पूरी निष्ठा से साथ रहने वाली पीढ़ियों की पीढ़ियाँ मिलेंगी।

शशि–क्या आपको लगता है कि महिलाओं को अभी और स्वतंत्रता और अवसरों की जरूरत है?

डॉ. प्रीतम: मैं तो समझती हूँ कि महिलाएँ अभी भी पराधीन हैं। उनमें अंधविश्वास भी काफी है। आज उन्हें महज कुछ ज्ञान देने की जरूरत है। निश्चय ही वह बहुत समझदार होती हैं। वह कोई भी बात बहुत जल्दी समझ जाती हैं अत: बहुत जल्दी समझौता भी करती हैं। उन्हें अपने अधिकारों के प्रति थोड़ा और जागरूक करना पड़ेगा। ताकि वह स्वतंत्रता का सही अर्थ समझ सकें।

शशि–महिला दिवस महिलाओं की स्थिति सुधारने में कितना सहायक है?

डॉ. प्रीतम: एक दिन ही सही, हम महिलाओं के नाम करके कम से कम उनके प्रति सम्मान तो प्रकट करते हैं। इसी बहाने इस दिन महिलाओं के हित के लिए कुछ घोषणाएँ भी हो जाती हैं। मेरे ख्याल से ऐसे दिवस अवश्य मनाए जाने चाहिए।

शशि–कला के क्षेत्र में आगे बढ़ने में आज महिलाओं को शोषित भी होना पड़ता है, आपकी नजर में इससे बचकर आगे बढ़ने के उपाए?

डॉ. प्रीतम जी: शोषित तो महिलाएँ एक युग से हो रही हैं। आज मीडिया अधिक आ गया है अत: शोर ज्यादा मच रहा है। आज कला के क्षेत्र में एक ऐसा तबका भी आ गया है कि वास्तविकता का कुछ पता ही नहीं चलता। यह ठीक है कि आज महिलाओं का शोषण बहुत ज्यादा हो रहा है, परन्तु महिलाओं को भी आज लगता है कि यह अवसर उनके हाथ से निकल गया तो फिर उन्हें कोई पूछने वाला नहीं। इससे वह हाथ आए अवसर को किसी भी रूप में गंवाना नहीं चाहतीं। कुछ व्यक्ति सदैव ऐसे अवसरों की तलाश में ही रहते हैं।

शशि– महत्वाकांक्षी युवतियों के लिए आपका कोई संदेश?

डॉ. प्रीतम: मैं चाहती हूँ कि हर लड़की आगे बढ़े। उनकी

आकांक्षाएँ बहुत होती हैं। जिंदगी को सदैव एक ठीक नजरिए से देख जाना चाहिए। उसके प्रति निराश नहीं हों। आज की युवती सुंदर भी है और अपने आपको मेंटेन करना भी जानती है। ऐसे में जिस क्षेत्र में भी वह है उसमें उसे मास्टरी प्राप्त करनी चाहिए। इससे सफलता उसके कदम चूमेगी। फल प्राप्त करने की एक प्रक्रिया होती है परन्तु आज तो स्थिति यह है कि सबको पका-पकाया चाहिए, चाहे जैसे भी मिले। सभी पूरी तरह से मेहनत करना नहीं चाहते हैं। इसी से निराशा और अवसाद की घटनाएँ जन्म लेती हैं अत: इससे बचना चाहिए।

शशि– आपकी पसंदीदा महिलाएँ?

डॉ. प्रीतम: इंदिरा जी से मेरा विशेष लगाव था। जब उनकी मृत्यु हुई थी तब मैं खूब रोई थी। साहित्य के क्षेत्र में मैं चित्रा मुद्गल और महादेवी वर्मा को पसंद करती हूँ।

शशि–आपने अब तक कितना पाया और समाज को कितना दिया है?

डॉ. प्रीतम: कहते हैं धन कमाना मुश्किल नहीं है परन्तु नाम कमाना ज्यादा मुश्किल है। जो भी अच्छे कार्यक्रम होते हैं उनमें मैं अवश्य जाती हूँ। पैसों के पीछे मैं नहीं भागती और न ही किसी भी कीमत पर या कैसी भी सीमाएँ लांघ कर कुछ पाना ही चाहती हूँ।

***

-हम सब साथ साथ पत्रिका, 916- बाबा फरीदपुरी, वेस्ट पटेल नगर, नई दिल्ली-110008, मो. 9968396832, 9911606672

लघुकथा :

फ्रोज़न वॉइस-सीताराम गुप्ता

फोन की घंटी बजने पर रजनी ने फोन उठाया तो पहले तो उसने फोन करनेवाले को पहचाना ही नहीं लेकिन बाद में काफी देर तक बातें होती रहीं। फोन सुषमा का था। लगभग बीस साल बाद आया था सुषमा का फोन इसी से पहचानने में देर हुई। सुषमा रजनी की दोस्त शशि की छोटी बहन है। सुषमा का नाम सुनते ही चौबीस साल पुरानी यादें ज़हन में कुलबुलाने लगीं। सुषमा अपने पति समीर के साथ किसी काम से कई बार रजनी के पास आती रहती थी। इसी दौरान समीर से भी मेरे अच्छे संबंध बन गए। उन्हीं दिनों मेरे भाई का विवाह निश्चित हुआ था। रजनी ने कहा कि भाई की शादी में सुषमा और समीर को भी निमंत्रण दे आते हैं। शशि को भी अच्छा लगेगा। नहीं का प्रश्न ही नहीं उठता था। कड़कड़ाती ठंड में एक शाम सुषमा और समीर के यहाँ जाने का कार्यक्रम बना।

सुषमा और समीर के घर पहुँचने पर घंटी बजाई तो दरवाज़ा समीर ने खोला और हमें कुर्सियों पर बिठाकर आवाज़ लगाई, ''सुषमा देखो रजनी जी और मुद्गल जी आए हैं भाई की शादी का निमंत्रण देने।'' सुषमा जब काफी देर तक बाहर नहीं आई तो समीर कार्ड और मिठाई का डिब्बा लेकर अंदर चले गए। ''अब कृपया बाहर जाकर मुझे चाय बनाने के लिए मत बोलना।''

आवाज़ सुषमा की थी। उसने ये बात हमें सुनाने के लिए ही ज़ोर से कही थी या नहीं ये तो नहीं पता चलता था लेकिन उसके डायलॉग का एक-एक शब्द स्पष्ट रूप से कर्णगोचर हो रहा था। वास्तव में सुषमा का डीलडौल व चालढ़ाल ही नहीं उसकी आवाज़ में भी पुरुषोचित स्पर्श व्याप्त है।

रजनी और मैं एक दूसरे का मुँह देखने के अतिरिक्त और कर भी क्या सकते थे? तभी समीर बाहर आए और हमसे पूछा कि हम चाय लेंगे या कॉफी? नहीं आज नहीं, आज ज़रा जल्दी में हैं। फिर कभी आराम से आपके साथ बैठकर चाय पिएँगे। इतना कह कर हम चलने लगे तो समीर ने बमुश्किल कहा, ''बड़ी ठंड है आज थोड़ी-थोड़ी चाय तो ले ही लेते।'' लग रहा था ठंड के कारण जैसे समीर की आवाज़ भी जम गई हो। जमी हुई पानी की बोतल से जैसे बूँद-बूँद पानी बाहर निकलता है वैसे ही उसकी आवाज़ बड़ी मुश्किल से एक-एक शब्द कर धीरे-धीरे बाहर आ रही थी। उसकी आवाज़ से साफ झलक रहा था कि अगर हम चाय पीने के लिए रुक गए तो अनर्थ हो जाएगा।

***

ए डी-106-सी, पीतम पुरा, दिल्ली-110034
फोन नं 09555622323
Email: srgupta54@yahoo.co.in

सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह 'कौन सी ज़मीन अपनी' का असामी अनुवाद -कुनखन आपून भूमि का विमोचन कैनेडा में हुआ। अवसर था ढींगरा फैमिली फाउन्डेशन और हिन्दी चेतना के सम्मान समारोह का। इस का अनुवाद किया है डॉ. नीलाक्षी फुकन नेउग और डॉ. मनिका शइकिया ने। चित्र में कोने में खड़े हैं -कवि अभिनव शुक्ल और सुधा ओम ढींगरा। पुस्तक को पकड़े हैं प्रसिद्ध कथाकार डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शिनी, श्री श्याम त्रिपाठी, (मुख्य संपादक हिन्दी चेतना), कैनेडा के दूतावास के प्रमुख श्री अखिलेश मिश्र, मार्खम के काउंसलर श्री ली, प्रतिष्ठित उपन्यासकार श्री महेश कटारे एवं प्रतिष्ठित कथाकार पंकज सुबीर।

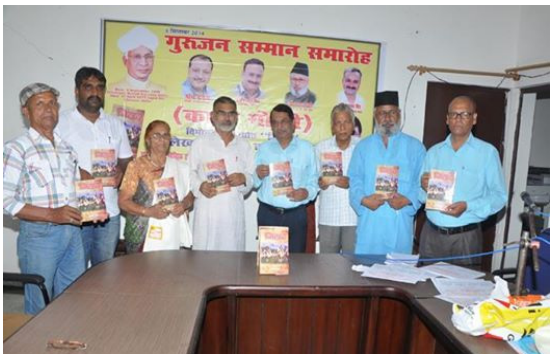

ऐतिहासिक उपन्यास जेहाद का विमोचन

किच्छा (ऊधमसिंह नगर) की साहित्यिक संस्था गुंजन द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में आरती प्रकाशन लालकुआँ से प्रकाशित डॉ. सुशील कुमार शर्मा द्वारा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखित उपन्यास जेहाद का विमोचन नगरपालिका किच्छा के समागार में किया गया। इस अवसर पर नगर की अनेक गणमान्य विभूतियाँ उपस्थित थीं। चित्र में आशा शैली के साथ प्रेरणा अंशु के सम्पादक प्रतापसिंह और डॉ. सुशीलकुमार के साथ जनता इंटर कालेज के प्रिसिपल श्री बिंजौला एवं गुंजन के अध्यक्ष नबी अहमद मंसूरी खड़े हैं

वीरेंद्र शर्मा के कविता संग्रह का विमोचन

रामपुर बुशहर, (हि. प्र.) में खण्ड विकास कार्यालय में परिसर में स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष्य में ध्वजारोहण के पश्चात आरती प्रकाशन द्वारा प्रकाशित कविता संग्रह 'तलाश नए सूरज की' का विधिवत विमोचन किया गया। वीरेंद्र शर्मा युवा कवि हैं। इन्होंने बाल्यकाल से ही अपनी लेखनी को दिशा दी है, परन्तु सुखद आश्चर्य कि इतनी कम आयु में इन्होंने शृंगार रस में न लिखकर देशप्रेम की चाशनी में अपनी लेखनी को डुबोया है।

प्रकाश चन्द्र लोशाली चुने गए अध्यक्ष

कूर्मांचल सांस्कृतिक एवं कल्याण परिषद् (कांवली) देहरादून के द्विवार्षिक चुनाव 'कूर्मांचल भवन' जी.एम.एस. रोड देहरादून में सम्पन्न हुए, जिसमें निम्न पदाधिकारी निर्वाचित हुए। गर्व की बात यह है कि शैलसूत्र के ये आजीवन सदस्य चौथी बार निर्विरोध इस पद हेतु निर्वाचित हुए हैं।

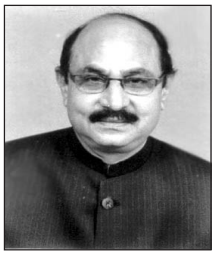

अध्यक्ष:-
श्री प्रकाश चन्द्र लोशाली,
वरिष्ठ उपाध्यक्ष:- राजेंद्र पंत,
उपाध्यक्ष:- जी.डी. जोशी,
उपाध्यक्ष (महिला) श्रीमती दया बिष्ट,
सचिव:- गोविन्द वल्लभ पाण्डे,
संगठन सचिव:- शेखर जोशी,
कोषाध्यक्ष:- एस.एस. ठठोला,
सांस्कृतिक सचिव:- हरीश पाण्डे,
सांस्कृतिक सचिव (महिला):- प्रेमलता बिष्ट एवं
लेखा परीक्षक मोहन चन्द्र पाण्डे चुने गए।

लक्ष्मी खन्ना 'सुमन' सम्मानित

शैलसूत्र के सम्मानित आजीवन सदस्य, विख्यात बाल साहित्य हस्ताक्षर, रससिद्ध गीत एवं ग़ज़ल रयचिता, लघुकथाकार श्री लक्ष्मी खन्ना 'सुमन' को म.प्र. तुलसी साहित्य अकामी द्वारा उनके श्रेष्ठ लेखन के लिए एक भव्य समारोह में सम्मानित किया गया इस क्षेत्र में तुलसी साहित्य अकादमी वर्षों से सराहनीय कार्य कर रही है।

रचनाएँ आमन्त्रित-

भारतीय संस्कृति में गर्भ धारण से लेकर मृत्यु प्रयन्त 16 संस्कारों की अवधारणा पायी जाती है। इन सभी संस्कारों का आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक आधार है। प्राचीन काल में ज्ञान, संस्कृति, सभ्यता तथा सिद्धांतों को लिपिबद्ध नहीं किया जा सका अथवा वह कालान्तर में कहीं खो गया। हाँ भारतीय जनमानस ने श्रुति तथा वाचक परम्परा व पारम्परिक रूप से क्रियान्वयन के द्वारा सभी कुछ सुरक्षित एवं संरक्षित रखा है। हमारे अनेक विद्वानों द्वारा इस विषय पर शोध कार्य भी किये जा रहे हैं और यथा संभव लिपिबद्ध करने के प्रयास भी जारी हैं।

प्रत्येक संस्कार के लिए लोक-गीतों का प्रचलन है जिसके माध्यम से संस्कार के महत्त्व को दर्शाया जाता है। भारतीय संस्कृति, चिंतन एवं दर्शन विश्व में सर्व श्रेष्ठ माना जाता है। हमारे सभी संस्कार वैज्ञानिक विवेचनायुक्त हैं। हमारा प्रयास है कि देश के कोने-कोने से विभिन्न भाषाओं व बोलियों में बिखरे पड़े संस्कारों के महत्त्व, संस्कार विधि तथा लोक गीतों को संग्रहित कर शोध-ग्रन्थ के रूप में समाज के सामने प्रस्तुत कर सकें।

मन्जू पाण्डे 'उदिता' सम्मानित

त्रैमासिक पत्रिका शैलसूत्र की मुख्य प्रबंधक एवं सुविख्यात कवयित्री श्रीमती मंजू पाण्डे 'उदिता ' को राजस्थान के नाथद्वारा में साहित्य मंडल द्वारा आयोजित्त कार्यक्रम 'हिंदी लाओ देश बचाओ' में उनके व्याख्यान 'सूचना प्रौद्योगिकी और हिंदी' के लिए सम्मानित किया गया।

शैलसूत्र परिवार की पारिवारिक गोष्ठी में पत्रिका के हितों को ध्यान में रखते हुए कुछ निर्णय लिए गए। कुछ नए दायित्व दिए गए तो कुछ पुराने लोग जो अपने व्यक्तिगत कारणों से पत्रिका के लिए काम नहीं कर पा रहे हट गए। श्रीमती मंजू पाण्डे उदिता को प्रबंध का दायित्व दिया गया तो सुश्री पुष्पा जोशी को प्रचार का जिम्मा मिला। चित्र में दायें से आशा शैली, विनयसागर जायसवाल, मंजू पाण्डे 'उदिता', पुष्पा जोशी, श्यामसिंह रावत, आनन्द गोपाल सिंह बिष्ट और सत्यपाल सिंह 'सजग' उपस्थित हैं।

सलुम्बर (राज.) में बाल सानित्य के कार्यक्रम में एकत्र सानित्यकार। कार्यक्रम की कर्ता-धर्ता श्रीमती विमला भण्डारी अपने मेहमान साहित्यकारों के साथ।

उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय

तीनपानी बाईपास रोड, हल्द्वानी, नैनीताल - 263139

E-mail : info@uou.ac.in फोन : 05946-261122, फैक्स : 05946-264323

प्रवेश की अंतिम तिथि : 30 नवम्बर, 2014
रु. 250 विलम्ब शुल्क के साथ अंतिम तिथि : 31 दिसंबर, 2014

प्रवेश प्रारम्भ

टोल फ्री न. 18001804025
Website : www.uou.ac.in

वर्ष 2005 में स्थापित यह विश्वविद्यालय सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय है, जो पूरे प्रदेश में फैला है। विश्वविद्यालय का मुख्य उद्देश्य मुक्त और दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के माध्यम से उच्च शिक्षा को दूर-दराज के क्षेत्रों तक पहुँचाना है। राज्य भर में आठ क्षेत्रीय निदेशालयों और लगभग 350 अध्ययन केन्द्रों के साथ आज यह पूरे प्रदेश में फैल चुका है। विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री, काउंसिलिंग और नवीनतम प्रौद्योगिकी की सहायता से उच्च शिक्षा को छात्रों तक पहुँचाता है। विश्वविद्यालय विभिन्न कार्यक्रमों में विशेष कार्यशालाएं आयोजित करता है।

निम्नलिखित पाठ्यक्रमों के लिए आवेदन आमंत्रित किये जाते हैं :

मास्टर डिग्री पाठ्यक्रम

- एम.ए./एम.कॉम. (सभी विषय)
- एम.एससी. (सभी विषय)
- पर्यटन / होटल प्रबन्धन
- योग
- एम.बी.ए.
- एम.एस.डब्लू.
- एम.ए. (एजुकेशन)
- एल.एल.एम.
- एम.एस.सी. (आई.टी.)
- कम्प्यूटर एप्लीकेशन्स
- जियो इन्फोर्मेटिक्स
- पत्रकारिता एवं जनसंचार

पी.जी. डिप्लोमा पाठ्यक्रम

- कम्प्यूटर एप्लीकेशन्स
- आपदा प्रबन्धन
- जियो इन्फोर्मेटिक्स
- पत्रकारिता एवं जनसंचार
- विज्ञापन एवं जनसम्पर्क
- ब्रॉडकास्ट जर्नलिज्म एंड न्यू मीडिया
- साइबर लॉ
- मानव संसाधन प्रबन्धन
- मार्केटिंग मैनेजमेंट
- योग

स्नातक पाठ्यक्रम

- बी.ए.
- बी.कॉम
- बी.एस.सी.
- बी.सी.ए.
- बी.बी.ए.
- बी.टी.एस. (पर्यटन में स्नातक)
- बी.एच.एम. (होटल मैनेजमेंट)
- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा

डिप्लोमा पाठ्यक्रम

- कम्प्यूटर एप्लीकेशन्स
- सब्जी एवं फल संवर्धन
- फलित ज्योतिष
- टूरिज्म स्टडीज
- कॉमर्शियल हॉर्टीकल्चर
- जन स्वास्थ्य एवं समुदाय पोषण
- योग व प्राकृतिक चिकित्सा
- आवास प्रबन्ध

इनके अतिरिक्त और भी अनेक डिप्लोमा एवं प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम। विस्तार से देखें वेबसाइट

ऑनलाइन माध्यम से संचालित पाठ्यक्रम

विशेषताऐं एवं लाभ - • विशेषज्ञ व्याख्याताओं द्वारा वीडियो व्याख्यान • छात्र परामर्श एवं सहायता हेतु समर्पित सेवा • आसान ऑनलाइन प्रवेश प्रक्रिया

उपलब्ध पाठ्यक्रम - • स्नातक : बी.ए., बी.कॉम., बी.बी.ए. • स्नातकोत्तर : एम.काम., एम.ए., एम.बी.ए. • पत्रकारिता एवं जनसंचार, लॉ, समाज कार्य • पीजी डिप्लोमा : विज्ञापन एवं जनसंपर्क, सायबर लॉ, डिजास्टर मैनेजमेंट, ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेंट, ब्रॉडकास्ट जर्नलिज्म एंड न्यू मीडिया

सम्पर्क करें : www.uouonline.ac.in, sms UKOU to 56767, Call - 8899660011

आवेदन पत्र और प्रोस्पेक्टस हमारे मुख्यालय, क्षेत्रीय केन्द्रों और अध्ययन केन्द्रों से प्राप्त किये जा सकते हैं।

DEHRADUN :
Shri Guru Ramrai P G College, Pathri bagh, Dehradun.
Email: dehradun@uou.ac.in
Phone: +91-9412031183

ROORKEE :
B. S. M. P. G. College, Roorkee
Email: roorkee@uou.ac.in
Phone: +91-9412439436

PAURI :
Hemwati Nandan Bahuguna Garhwal University, Pauri
Email: pauri@uou.ac.in
Phone: +91-9412991540

UTTARKASHI :
Government College Uttarkashi
Email: uttarkashi@uou.ac.in
Phone: +91-9411145096

HALDWANI :
M. B. P. G. College, Haldwani
Email: haldwani@uou.ac.in
Phone: +91-9411162527

RANIKHET :
Govt PG College, Ranikhet
Email: ranikhet@uou.ac.in
Phone: +91-7579132634

PITHORAGARH :
Govt P.G. College, Pithoragarh
Email: pithoragarh@uou.ac.in
Phone: +91-9412093678

BAGESHWAR :
Govt P.G. College Bageshwar
Email: bageshwar@uou.ac.in
Phone: +91-9412044914

उत्तराखण्ड सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय

***

समकालीन हिंदी काव्य और सृजनात्मकता के मायने -रवीन्द्र प्रभात

कहा जाता है कि जब कोई कवि वस्तु जगत में स्थित किसी भाव, घटना या तत्त्व से संवेदित होता है तो वह उसे अपनी समर्थ काव्य भाषा द्वारा सहृदय तक संप्रेषित करने का उपक्रम करता है। वह आपने अभिप्रेत भाव को तद्भव रूप में संप्रेषित करने के लिए अपने सृजन क्षण में, शब्दों की सामर्थ्य एवं सीमा का सूक्ष्म संधान कर उसे प्रयुक्त करता है। काव्य रचना अपने आरम्भिक क्षण से ही एक सायास क्रिया के रूप में आरम्भ हो जाती है, क्योंकि कवि के मानस कल्प में शब्दों की होड़ सी लग जाती है। यही शब्द श्रृंखलाबद्ध होकर काव्य का रूप ले लेता है। जिस काव्य में हमारे समय के महत्वपूर्ण सरोकारों, सवालों से टकराती एक विशेष रूप और गुणधर्म वाली बात परिलक्षित हो वही समकालीन काव्य है, ऐसा माना जाता है।

समकालीन शब्द में एक सहज अतिव्याप्ति है, पर दूसरी ओर इसमें एक निश्चित एतिहासिक परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट करने की क्षमता भी है। इसका सौन्दर्य-बोध मानवीय सरोकारों से जुड़ता है और समकालीनता को नितांत समसामयिकता के आग्रह से भिन्न व्यापक अर्थ प्रदान करता है। छायावाद से पूर्व अनगिनत कवि शब्द, अलंकार, छंद, लय, नाद में ही निमग्न फँसे रह जाते थे, खुलकर अभिव्यक्ति का विस्तार नहीं हो पाता था, इसलिए छायावाद के दौरान ही समकालीन हिंदी कविता का बीजारोपण हुआ, किन्तु यह पुष्पित और पल्लवित हुई प्रगतिवाद के दौरान ।

वैसे छायावाद में ही स्वच्छंदता वादी कल्पना और यथार्थ का संघर्ष प्रकट होने लगा था । कविता अपनी चंदिली मीनारों से बाहर निकालने को बेताब होने लगी थी, जीवन का कर्कश उद्घोष करने को बेचौन दिखने लगी थी यह। शायद इस बात का आभास महाप्राण निराला को छायावाद के दौरान ही हो गया था, इसीलिए उन्होंने छायावाद के भीतर ही छायावाद का अतिक्रमण करके एक नयी काव्य-भूमि तैयार की जो आगे चलकर समकालीन कविता या नई कविता के रूप में परिवर्तित हुई। इस काल में सृजित 'तोड़ती पत्थर', 'कुकुरमुत्ता', 'नए पत्ते' की अनेक कवितायें आधुनिक हिंदी कविता में उभरती हुई यथार्थवादी चेतना का स्पष्ट संकेत देती है ।

इन कविताओं में जीवन के प्रति एक गहरी आसक्ति, ललक अर्थात रागधर्मी जीवनोन्मुखता ही रोमांटिक नवीनता का आभास कराती है। हालाँकि कुछ आलोचकों का मानना है कि नई कविता ज्ञान शून्यता में पैदा होती है और ज्ञान के उत्कर्ष से स्वयमेव भाव का अपकर्ष होता है, जबकि इससे अलग तर्क देते हुए समकालीन कविता के प्रबल पक्षधर, अज्ञेय और मुक्तिबोध इसे सिरे से खारिज करते नज़र आते हैं। अज्ञेय का कहना है कि 'भाषा को अपर्याप्त मानकर विराम संकेतों से, अंकों और सीधी तिरछी लकीरों से, छोटे-बड़े टाईप से, सीधे या उलटे अक्षरों से, लोगों और स्थानों के नामों से, अधूरे वाक्यों से - सभी प्रकार के इतर साधनों से कवि उद्योग करने लगा कि अपनी उलझी हुई संवेदना कि सृष्टि पाठकों तक पहुँचा सके।' जबकि इसी सन्दर्भ में मुक्तिबोध की टिप्पणी है कि 'मैं कलाकार की स्थानान्तरगामी प्रवृति पर बहुत जोर देता हूँ। आज के वैविध्यमय, उलझनों से भरे, रंग-विरंगे जीवन को यदि देखना है तो अपने वैयक्तिक क्षेत्र से एकबार तो उड़कर बाहर जाना ही होगा .... कला का केंद्र व्यक्ति है पर उसी केंद्र को अब दिशाव्यापी करने की आवश्यकता है ।'

यदि इसकी विकासयात्रा पर गौर किया जाए तो समकालीन कविता या नई कविता का बीजारोपण 1936 के आसपास हुआ, जब कविता में कांग्रेस और वामपंथी दृष्टकोण एक साथ परिलक्षित हुए। इस वर्ष को कविता की दुनिया में हुए कुछ बुनियादी बदलाव के रूप में देखा जाता है। इस काल के दौरान हिंदी में जो नई यथार्थवादी काव्यशैली का आगमन हुआ उसमें आधुनिक दृष्टि के साथ देसी लोकचेतना का सार्थक समावेश था ।

हालाँकि नई कविता की एक निश्चित काव्य प्रवृति

के रूप में पहचान स्पष्ट हुई 1950 के दौरान, किन्तु केवल एक दशक बाद ही यानी 1960 के बाद एतिहासिक मोहभंग के व्यापक अनुभव के फलस्वरूप कविता की भूमिका में स्पष्ट अंतर आया। यही वह समय था जब केदारनाथ सिंह ने धर्मयुग में प्रकाशित अपने आलेख में 'शुद्ध कविता से प्रतिबद्ध कविता की ओर' चलने की सलाह दी। 1980 के बाद कविता सच्चे अर्थों में जीवनधर्मी प्रतीत हुई जब नई कविता को नए बिम्ब के साथ प्रस्तुत करने हेतु कुमार विकल, ज्ञानेन्द्रपति, आलोक धन्वा, मंगलेश डबराल, अरुण कमल, राजेश जोशी, उदय प्रकाश आदि युवा कवियों का आगमन हुआ ।

सभी चरणों में अपनी सार्थक उपस्थिति दर्ज कराने वाले समकालीन कवियों की चर्चा की जाए तो निस्संकोच महाप्राण निराला के बाद अज्ञेय इस दिशा में सर्वाधिक सक्रिय और सम्मानित कवियों में से एक माने गए है, जबकि शमशेर को नई कविता का प्रथम नागरिक माना गया है। इनके समकक्ष कवियों में अग्रणी रहे हैं मुक्तिबोध, नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, गिरिजा कुमार माथुर, भवानी प्रसाद मिश्र, भारत भूषण अग्रवाल, नरेश मेहता, हरी नारायण व्यास, धर्मवीर भारती, जगदीश गुप्त, ठाकुर प्रसाद सिंह, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कुँअर नारायण, श्री कान्त वर्मा, केदारनाथ सिंह, दुष्यंत कुमार, विपिन कुमार अग्रवाल, कीर्ति चौधरी, मलयज, परमानंद श्रीवास्तव, अशोक वाजपेयी, रमेश चन्द्र शाह, श्री राम वर्मा, धूमिल आदि। इनके बाद के कवियों में अग्रणी रहे हैं कमलेश, कुमार विकल, चंद्रकांत देवताले, देवेन्द्र कुमार, विजेंद्र, प्रयाग शुक्ल, विनोद कुमार शुक्ल, लीलाधर जगूड़ी, ज्ञानेन्द्रपति, वेणु गोपाल, मंगलेश डबराल, ऋतुराज, राजेश जोशी, सोमदत्त, गिरधर राठी, सौमित्र मोहन, नन्द किशोर आचार्य, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, विनोद भारद्वाज, विष्णु नागर, असद जैदी, अरुण कमल, उदय प्रकाश, स्वप्निल आदि।

उपरोक्त सारे कवि चाहे जिस परिवेश या काल के रहे हों अपने सूक्ष्म एवं जटिल भावों को अभिव्यक्त करने में सफल रहे हैं। अपने भावों के सफल संप्रेषण के लिए सभी स्थूल रूप में अथवा नए-नए विम्ब के माध्यम से अभिव्यक्त करते हुए दिखाई देते हैं। कहा भी गया है कि सफल कवि वही है जो शब्दों का अद्‌भुत पारखी हो। शब्द के अन्दर निहित विभिन्न अर्थ छवियों में से अपने अनुभूत भाव के अनुकूल अर्थ निकालने में सफलता प्राप्त कर ले। साथ ही संदर्भानुकूल शब्द चयन, काव्य की सर्जन-क्षमता को काफी प्रभावित करता है। किसी शब्द का एक निश्चित अर्थ नहीं होता, बल्कि वह अनेक संभाव्य अर्थ एवं अर्थ छवियों का समूह होता है। सच्ची सृजनात्मकता के मायने तब समझ में आते हैं जब कोई कवि विभिन्न ध्वनियों के समूह और उनके अनेक संभाव्य अर्थ वलयों में से किसी विशेष वलय के रंग को प्रभावशाली एवं व्यंजन-क्षम बनाकर प्रस्तुत कर दे । हिंदी के प्रमुख आलोचक नामवर सिंह ने इस कविता प्रवृति को एक प्रकार के रोमांटिक नवोत्थान की संज्ञा दी है, वहीं मुक्तिबोध उसमें एक 'क्लासिकी' रुझान देखना चाहते थे।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कवि के मानस-जगत में उत्थित भाव और विचारों की इन्द्रियानुभूति बिम्बों में सफल अभिव्यक्ति ही समकालीन काव्य की सच्ची सृजनात्मकता है। समकालीन कवि को समकालीन बने रहने के लिए अपने सूक्ष्म भाव को व्यक्त करने हेतु इन्द्रिय ग्राह्य शब्दों का बड़ा ही सटीक प्रयोग करना होता है, क्योंकि उसके एक-एक शब्द पूरे प्रकरण में इस प्रकार फिट रहते हैं कि उनके संधान पर कोई अन्य पर्यायवाची शब्द रखने से पूरी की पूरी भाव शृंखला भरभरा जाती है। निष्कर्ष में यही कहा जा सकता है कि टूटते हुए मिथक और चटकती हुई आस्थाओं के बीच कविता कथ्य-शिल्प और भाव तीनों ही दृष्टिकोण से श्रेष्ठता कि परिधि में आ जाए तभी समकालीन काव्य की सार्थकता है, अन्यथा नहीं। शब्दों की उपयुक्तता को ही ध्यान में रखकर पाश्चात्य विचारक कालरिज ने समकालीन कविता को 'श्रेष्ठतम शब्दों का श्रेष्ठतम क्रम' कहा है।

***

'परिकल्पना' एन-19107, सेक्टर एन
संगम होटल के पीछे, अलीगंज
लखनऊ -226022(उत्तरप्रदेश)
मो.9415272608
ई-मेल- ravindra-prabhat@gmail-com

कौन आया ?

नागेश पांडेय 'संजय'

द्वार पर आहट हुई है,
देख तो लो, कौन आया ?

तड़पते मन की कसक की
गंध शायद पा गया वह,
उसे आना ही नहीं था
मगर शायद आ गया वह।
मुझे घबराहट हुई है,
देख तो लो, कौन आया ?

ज्योति यह कैसी ? बुझाने पर
अधिक ही जगमगाई।
यह फसल कैसी ? कि जितनी
कटी, उतनी लहलहाई।
प्रीति अक्षयवट हुई है,
देख तो लो, कौन आया ?

थम गईं शीतल हवाएँ,
दग्ध उर बेहाल है जी।
प्यास अब भी तीव्रतम है,
पर नदी पर जाल है जी।
आस सूना तट हुई है,
देख तो लो, कौन आया ?

क्यों जगत की वेदनाएँ
पल रहीं मन के निलय में ?
मधुर सपनों की चिताएँ
जल रहीं जर्जर हृदय में।
जिंदगी मरघट हुई है,
देख तो लो, कौन आया ?

जिंदगी की देहरी पर,
मौत को रोके खड़ा हूँ।
नयन तुझको देख भर लें,
बस इसी ज़िद पर अड़ा हूँ।
एक ही अब रट हुई है,
देख तो लो, कौन आया ?

सुभाष नगर, शाहजहाँपुर 242001
मो. 9451645033

बुझ गया है दीप अब तो

–डॉ. ब्रजेश कुमार मिश्र

बुझ गया है दीप अब तो, रह गयी अवशेष बाती
भावनाएँ सो गई,
कल्पनाएँ खो गई हैं।
बीज उर में चिर व्यथा के,
वंचनाएँ बो गयी हैं।
छा गए अवसाद के घन,
हर विकल घड़कन सताती।
रह गयी अवशेष बाती।

साज है पर तार टूटे,
चित्र के रंग आज छूटे।
मौन हैं लय–धुन विहँसती,
हृदय से सब राग रूठे।
नींद भी हो गयी बैरन,
पीर निशदिन ही जगाती।
रह गयी अवशेष बाती।

नीड़–उर हत हो गया है,
मृदु समय गत हो गया है।
थार–सा अब हुआ जीवन,
रेत तन–मन हो गया है।
रह गया सूना निकेतन,
है पड़ी बस शेष थाती
रह गयी अवशेष बाती

मिश्रा नर्सिंग होम, सिद्धार्थ कालोनी,
आर्य समाज रोड, मुजफ्फ़र नगर (उ.प्र.)

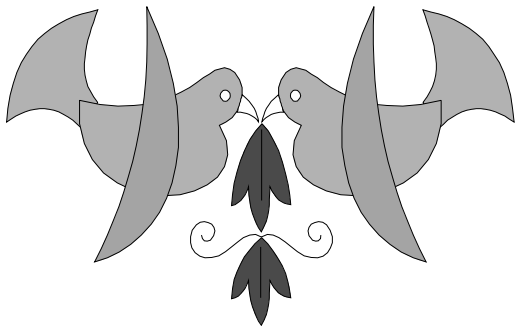

अब विश्व में हिन्दी की स्थिति अच्छी है-डॉ. प्रभुलाल चौधरी

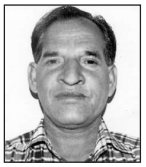

संसार में जिस भारतभूमि पर सर्वप्रथम सभ्यता एवं संस्कृति का उद्‌भव और विकास हुआ हो, जिस भूमि पर ऋगवेद जैसे उत्कृष्ट साहित्य का सृजन हुआ हो, जिस ज्ञानभूमि से सांख्ययोग, दाशमिक प्रणाली, ज्योतिष, ग्रह-नक्षत्रों की दूरी, काल की गणना आदि का निर्धारण हुआ हो, उस देश की भाषा का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि उसकी जड़ें कितनी गहरी हैं। हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा व राज भाषा ही नहीं अपितु वैश्विक स्तर पर सम्पर्क भाषा भी है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम वादों के फेर में न फंसकर हिन्दी को समृद्ध, शक्तिशाली व सक्षम बना दें ताकि उसके अस्तित्व पर कोई आँच न आने पाए।

यह बात तो स्वयं में निर्विवाद सत्य है कि इक्कीसवीं सदी भूमण्डलीकरण और वैश्वीकरण की शताब्दि है। सूचना और प्रौद्यौगिकी के इस युग में हिन्दी का वर्चस्व बनाए रखने के लिए इसे नव्यतर वैज्ञानिक उपकरणों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना होगा।

यदि हिन्दी इस दौड़ में पिछड़ गई तो उसका परिणाम शताब्दियों तक भुगतना पड़ेगा और हाथ मल-मलकर पछताना पड़ेगा। जो हिन्दी संसार के दर्जनों देशों में बोली जाती हो, जो देश के 100 करोड़ लोगों का कण्ठहार हो तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर अपना वर्चस्व कायम करने में सक्षम हो, उसे विश्वभाषा कहना अप्रासंगिक न होगा। आज आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दी को सूचना एवं प्रौद्यौगिकी के योग्य बनाकर उसके वैश्विक रूप को विश्व के मानचित्र पर प्रतिष्ठित किया जाए। बदलते वैज्ञानिक परिवेष के अनुरूप प्रयोगशालाओं में ध्वनियन्त्रों के माध्यम से हिन्दी उच्चारण बोध कराने, कोषों के माध्यम से हिन्दी भण्डार को विकसित करने तथा प्रयोग के आधार पर हिन्दी व्याकरण को भी व्यवस्थित करने की नितांत आवश्यकता है। भाषिक प्रयोगशालाओं के माध्यम से अहिन्दी भाषा-भाषियों को हिन्दी सिखाने से हिन्दी का वैश्विक वर्चस्व बढ़ेगा।

भारत भूमण्डलीकरण, वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण के कारण विश्व-व्यवस्था का अंग बन गया है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भों से जोड़ने का स्तुत्य प्रयास किया है। भारत भूमि में कार्यरत बहुत-सी विदेशी कम्पनियाँ अपने माल के विक्रय हेतु हिन्दी भाषा का प्रयोग कर रही हैं। अपनी उत्पादित सामग्री को उपभोक्ताओं तक पहुँचाने कि लिए इन कम्पनियों को हिन्दी का पठन-पाठन, शोध और प्रचार कार्य अनेक रूपों में दृष्टिगोचर होता है। विश्व के 30/35 देशों के सैकड़ों विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है।

बर्मा यानि वर्तमान म्यांमार में कभी हिन्दी का बड़ा प्रभाव रहा, किन्तु सैनिक शासन के पश्चात पड़ोसी देश होने के बावजूद दोनों देशों के बीच इतनी दूरी बढ़ गई कि बर्मा हमारे लिए पूर्ण रूप से एक अपरिचित देश बनकर रह गया। अनेक व्यवधान आज भी बने हुए हैं, परन्तु वहाँ के भारतवंशियों का हिन्दी के प्रति लगाव कम नहीं हुआ।

माण्डले, चोगला में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की शाखाएँ हैं। अनेक स्थानों पर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की परीक्षाएँ आयोजित हो रही है। वर्तमान सैनिक शासन ने भारतीयों पर अनेक प्रतिबंध लगाए हैं, परन्तु भारतीय मूल के नागरिक अपनी धार्मिक संस्कृति छोटी-छोटी संस्थाओं के माध्यम से अपने बच्चों को अपने पूर्वजों की भाषा हिन्दी से किसी तरह जोड़े हुए हैं।

श्रीलंका के तीनों विश्वविद्यालयों में उच्चस्तर तक हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है। पाकिस्तान के लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में हिन्दी एक वैकल्पिक विषय है। वहाँ कई शायर अपनी नज़्मों में संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग खुले-आम करते हैं। आख़िर हमारी सांझी संस्कृति का प्रभाव कहीं तो रहेगा ही, कुछ।

सम्पूण दुनिया में हिन्दी के प्रचार में विश्वविद्यालयों का उल्लेखनीय योगदान है। यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, का शायद ही कोई स्तरीय विश्वविद्यालय है जहाँ आज हिन्दी के पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था न हो।

फिनलैण्ड के हेलसिंकी विश्वविद्यालय में गत अनेक वर्षों से हिन्दी पढ़ाई जा रही है। वहाँ के अध्यापक प्रो. बातिन तिक्के ने गोदान का फिनिश भाषा में रूपान्तर ही नहीं किया, बल्कि 'हिन्दी-फिनिश' शब्दकोष भी तैयार किया है।

स्वीडन में उन् 1968 से हिन्दी विभाग का प्रारम्भ हुआ, वहाँ के प्राचीन विश्वविद्यालय उपशाला में। स्टाकहोम विश्वविद्यालय में भी भारतीय विद्या का एक अलग समृद्ध विभाग है जिसमें संस्कृत, तमिल, बांग्ला तथा हिन्दी साथ-साथ पढ़ाई जा रही है।

इसी तरह नार्वे के ओस्लो विश्वविद्यालय में भी हिन्दी की विशेष व्यवस्था है। वहाँ हिन्दी तथा ईरानी परिवार की सभी भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं। वहाँ के हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो. कुनुट क्रिस्तियांसन, फारसी, अरबी, पश्तू, बलूच, सिन्धी, नेपाली के साथ-साथ भारत की प्रायः सभी भाषाएँ जानते हैं। विश्व में आज वह अकेले व्यक्ति हैं जो इतनी भारतीय तथा अन्य भाषाओं के जानकार हैं। 'शान्तिदूत', अप्रवासी टाइम्स आदि पत्रिकाएँ वहाँ से प्रकाशित हो रही हैं।

युगोस्लाविया के जाग्रेव तथा बेल्ग्रेड विश्वविद्यालयों में गत 25 वर्षों से हिन्दी में अध्ययन का कार्य चल रहा है। बुल्गारिया और हंगरी में हिन्दी का कार्य और बड़े पैमाने पर हो रहा है। हिन्दी साहित्य का प्रचुर मात्रा में अनुवाद भी हुआ है।

पोलैण्ड इस दिशा में और भी आगे है। पोलैण्ड के भारत स्थित वर्तमान राजदूत प्रो. मारिया क्रिस्तोफ बृष्की संस्कृत और हिन्दी के जाने-माने विद्वान हैं। पोर्नोवस्की ने गोदान का अनुवाद पोलिश भाषा में किया है, प्राच्य विद्या संस्थान की डॉ. दानूता स्ताशिक का योगदान भी अविस्मरणीय है।

विदेशों में प्रवासी भारतीय बड़ी संख्या में बसे हुए हैं। जो अपने साथ भाषा, धर्म और संस्कृति भी ले गए। ऐसे प्रवासी भारतीयों के द्वारा धर्मिक ग्रंथों, रामायण, हनुमान चालीसा, श्रीमद्भागवत गीता, सुखसागर, आल्हा आदि के पठन-पाठन के कारण आज भी वहाँ हिन्दी जीवित है। बांग्लादेश, नेपाल, मॉरीशस, फीजी, जापान, गयाना, सूरीनाम, ट्रिनिडाड-टोबेगो, म्यांमार, भूटान, बहरीन, कुवैत, ओमान, कतर, श्रीलंका, ब्रिटेन, कनाडा, हॉलैण्ड, हांगकांग, थाईलैण्ड, सिंगापुर कीनिया, जाम्बिया, उगांडा, पोलॅण्ड, स्विटज़रलैण्ड, हंगरी, रूस आदि देशों के प्रवासी भारतीयों ने हिन्दी को जीवित रखने का महान उपक्रम किया है। विदेशों में हिन्दी के अनेक रूपविकसित हुए हैं। रूस में हिन्दी एक बोली 'ताजुज्बेकी' विकसित हुई है। सूरीनाम में 'सरनामी बोली' बोली जाती है, जो सूरीनाम के लोगों की भाषा है। मॉरीशस, थाईलैण्ड, रोमानिया, फिजी, जापान आदि देशों में अपने ही प्रकार की भाषा है, जो वहाँ की स्थानीय भाषाओं से प्रभावित होकर नए रूप में प्रतिष्ठित हो गई है। इस प्रकार हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप विकसित हुआ है और होने की सम्भावना है।

15, स्टेशन मार्ग, महिदपुर रोड, जिला उज्जैन
(म.प्र.) मो. 09893072718,
dev.pc62@gmail.com

हिंदी साहित्याकाश में भारतेंदु हरिश्चंद्र

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भारतेंदु हरिश्चन्द्र को आधुनिक हिन्दी के प्रणेता, पितामह व प्रवर्तक आधुनिक नाट्य कला, काव्य, व्यंग्य, मुकरियाँ, ग़ज़ल–हज़ल तथा गद्य में हिन्दी को नई दिशा देने वाले भारतेंदु हरिशचंद्र का जन्म 9 सितम्बर, 1850 में वाराणसी के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ में हुआ।

काव्य सृजन उन्हें अपने पिता से धरोहर की तरह मिला जिसके लक्षण उनकी बाल्यावस्था में ही मात्र पाँच वर्ष की आयु में लिखे एक दोहे से ही प्रकट हो गये थे जिसमें काव्य–सौष्ठव स्वाभाविक रूप से नजर आता है। भारतेंदु हिन्दी साहित्य के प्रति अनुराग के कारण मात्र 15 वर्ष की आयु में साहित्य की सतत सेवा में संलग्न हो गए और अपनी आयु के 18वें वर्ष में 'वचन–सुधा' हिन्दी पत्र आरम्भ किया जिसमें तत्कालीन विद्वानों की रचनाएँ प्रकाशित होती थी। सहृदय प्रवृत्ति भारतेंदु ने समाज–सेवा व साहित्य–सेवा में अपना सर्वस्व लगाने में भी हिचक न की, इसके लिए वे कर्ज के बोझ में दबते चले गए और अपनी इन्हीं परेशानियों से घिरे 6 जनवरी, 1885 को अपना 35वां जन्मदिन मनाने से पहले ही अपने दैहिक शरीर को छोड़ कर साहित्य–जगत में सदा–सदा के लिए अमर हो गए।

वस्तुतः भारतेंदु हिन्दी रचनाशीलता में एक जीवंतता का नाम है। –समादक प्रस्तुति अनहद कृति।

विनीत जौहरी 'बदायूनी'

याद आते हैं फिर उस ज़माने के दिन
खेलने-कूदने मुस्कुराने के दिन

भूल सकता हूँ कैसे वो बचपन के दिन
शाख़ से तोड़कर आम खाने के दिन

हाय क्या लौटकर फिर से आ पाएँगे
दूधिया चाँदनी में नहाने के दिन

उस समय की नदी में कहीं बह गए
एक नन्हीं परी के नहाने के दिन

वक़्त की तेज़ आँधी उड़ा ले गई
शोख़ फूलों से ख़ुशबू चुराने के दिन

ख़्वाब लगते हैं अब मुझको ऐ 'जोहरी'
उस मचलती नदी में नहाने के दिन

193-एफ., लेखनी कुटीर, भटनागर कालोनी,
सिविल लाइन्स, बरेली, मो. 9897995818

***

सीमा गुप्ता

उसको देखूँ तो ये दिल और धड़कता क्यों है
अक्स उसका मेरी आँखों में बिखरता क्यों है

गुफ़्तगू में जो तिरा जिक्र भी आ जाए है
दर्द तूफां की तरह दिल में बिखरता क्यों है

रात भर चाँद ने चूमी है तेरी पेशानी
उसको अफोस है सूरज ये निकलता क्यों है

वो न इज़हार करे बात अलग है लेकिन
देखकर मुझको भला बनता संवरता क्यों है

किसलिए फैला है हसरत का धुँआं चारों तरफ
दिल से इक आह का शोला ये निकलता क्यों है

सोचती रहती हूँ फुर्सत में यही मैं 'सीमा'
काम जो होना है आख़िर वही टलता क्यों है

***

द्वारा हरि किशन गुप्ता, 1342, दयानन्द कालोनी,
न्यू रेलवे रोड, गुड़गाँव, मो. 09891795318

कमलेश भट्ट 'कमल'

यहाँ परदेस में आकर अजब उलझन में हूँ
कई साथी भी हैं, फिर भी मैं अकेलेपन में हूँ

लहू से तर-बतर ख़बरों से हूँ हैरान खुद
शरीफों के शहर में हूँ कि मैं इक बन में हूँ

मेरी बाहर की इतनी साज-सज्जा पर न जा
असल में क्या हूँ मैं, वह तो मैं अपने मन में हूँ

जताने की भी क्यों इतनी जरूरत हो मुझे
अगर मैं दोस्त हूँ तो आपकी धड़कन में हूँ

मेरी यह चेतना इस जन्म तक सीमित नहीं
मैं थोड़ा-थोड़ा-सा पहले के भी जीवन में हूँ

लगा हूँ ढूँढ़ने में उसको ही बरसों से मैं
जो कहता है कि मैं ब्रह्माण्ड के कण-कण में हूँ

सी-631, गौड़ होम्स, गोविंद पुरम्,
ग़ाज़ियाबाद-201013, मो. 09968296694

***

डॉ. हरि 'फैज़ाबादी'

आदमी को आदमी से प्यार है
आजकल ये सोचना बेकार है

जिन्दगी को ये कहाँ से मिल गया
छल-कपट तो मौत का हथियार है

हार जाएगा बेचारा उम्र से
बात बच्चे की भले दमदार है

झोपड़ी हो या महल हो, हर जगह
आइने का एक ही किरदार है

क़ैद है जो मसलहत की बाँह में
उस रफ़ाक़त से मुझे इनकार है

कह दो खुशबू से रहे औक़ात में
ख़ार का भी फूल पर अधिकार है

***

नरेंद्र देव इण्टर कालेज, जलालपुर,
अम्बेदकर नगर, मो. 0450489789

साहित्य में पत्र-लेखन परम्परा-डॉ. कामता कमलेश

जब से मानव जीवन में एक से अधिक मनुष्यों, प्राणियों, जीव-जन्तुओं तथा प्रकृति के अनेक रूपों का प्रवेश हुआ है तभी से उनमें मेल-मिलाप का प्रचलन हुआ और आपसी सहचर-भावना, सह-अस्तित्व को प्रश्रय भी मिला। साथ ही प्रेम की इस रीति-नीति के माध्यम से कभी-कभार दूर रहने या जाने पर उसकी कुशलता जानने की प्रबल इच्छा का भी सूत्रपात हुआ होगा।

फलत: सर्वप्रथम किसी के माध्यम से अपने प्रिय को संदेश भेजने की प्रथा अति प्राचीन है। मेरे विचार में जब व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के पास कोई प्रत्यक्ष संदेश भेजे तो उसे पत्र की संज्ञा दी जा सकती है। लेखन प्रथा के पूर्व यह बात किसी अन्य माध्यम के द्वारा सम्भव प्रतीत होती है। प्राचीन काव्य-साहित्य और वाङ्मय में पशु-पक्षियों, पेड़ों, फूलों, पवन, मेघ और ध्वनि समूहों का सहारा लिया जाता था। इस हेतु हंस, कपोत, काग, कोयल, भ्रमर आदि विशेष रूप से अपनाए गए। साहित्य में इन सबको दूत बनाकर भेजने तथा पाती लिखने की प्रथा का उल्लेख मिलता है। सन् 1960 में मैं अपने दिल्ली प्रवास के समय वहाँ आए स्व. कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर से मिला तो उन्होंने पत्र को 'आत्मा का आटाग्राफ' मानकर इस विधा को मान्यता दी थी। उन्होंने अपने जीवन काल में कई हज़ार पत्र लिखे थे। उनके पत्र मानवीय और वैज्ञानिक रूप में सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं जो कि नई पीढ़ी के लेखकों को सुझाव के साथ प्रोत्साहित भी करते थे। यह मेरे लेखकीय जीवन का प्रारभिक काल था।

वस्तुत: पत्र किसी बात को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक या एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने का माध्यम होता है। पत्र शब्द की उत्पत्ति पत्+ष्ट्रन शब्दों से हुई है जो कि पुर्लिंग रूप में प्रयोग किया जाता है। इसका भाव चिट्ठी, पत्ता आदि भी होता है। अवध क्षेत्र में स्वतंत्रता पूर्व पोस्टमैन को 'चिट्ठी रसा' कहा जाता था। वैसे पत्र शब्द का प्रयोग सामान्यतया अंग्रेज़ी के लेटर या मैसेज से भी लिया जा रहा है।

हिन्दी साहित्य में 'संदेश काव्य' का उल्लेख मिला है, जिसमें मनोगत भाव, आकुल दशा और शारीरिक क्षीणता की अभिव्यक्ति का वर्णन होता है। इसी को 'पत्र गीतिका' का पूर्वरूप भी माना जाता है। सन्देश काव्यों में कालिदास का मेघदूत अधिक प्रसिद्ध है। इसी का व्यंग्य रूप 'रेल-दूत' नामक रचना हिन्दी में दिखाई देती है। पत्र गीति के रूप में भी विरहिणी शकुन्तला दुष्यन्त का पत्र लेखन महत्वपूर्ण है। यद्यपि इसे स्वतंत्र या मुक्त न कहकर नाटक का अंश मात्र कहा जा सकता है।

भक्तिकाल में कबीरदास और मीरा ने अपने प्रियतम को पत्र लिखने की इच्छा अपनी भावना में व्यक्त की थी। वे इसे पाती नाम से वर्णित करते हैं-

''प्रियतम को पतियाँ लिखूँ, जौ कहूँ होय बिदेस।
तन में, मन में, नैन में, ताको कहा संदेस।।

विरहिणी मीरा ने इसे अपने पदों में इस प्रकार वर्णित किया है-

''जिनके पिया बिदेस बसत हैं, लिख-लिख भेजें पाती।
मोरा पिय मेरे हिये बसत है, गूँज करहुँ दिन राती।।

दोनों कवियों ने प्रियतम से मिलने के लिए अपने हृदय की अनुभूति को प्रधानता देकर पाती की भावना को विश्लेषित किया है, किन्तु इसी काल के महाकवि सूर की गोपियों ने अपने प्रियतम श्री कृष्ण को जो संदेश व्यक्त किए वे लिखित ही नहीं अपितु भावात्मक हैं पर वे मानवीकरण के द्वारा सजीवता का रूप धारण कर लेते हैं, तभी तो सूर ने कहा है-

मसि खूटी, कागद जल भीज्यो, सरदौ आगि जरै।

इसी प्रसंग में श्री कृष्ण ने वियोगिनी गोपिकाओं को पाती भेजी और जब वह उन्हें मिली तो उसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई-

निरखत अंक सयाम सुन्दर के, वारि-वारि लावत छाती।
लोचन जल, मसि-कागद मिलि मसि,
ह्वै गयी, स्याम-स्याम की पाती।।

पत्र को देखते ही गेपिकाओं की आँखों से ऐसी अश्रुधारा बही कि पत्र में लिखे गए काले अक्षर भीगकर पत्र को पूरी कालिमा अर्थात् श्याम रंग से भर गए।

जायसी के पद्मावत में नागमती ने अपने प्रियतम को संदेश देते हुए कहा है-

पिउ से कहेउ संदेसड़ा, हे भौंरा हे काग।

सो धनि विरहिन जरि मरी, तेहिक धुंवां हम लाग।।

इस प्रकार के आत्मीय पत्र वार्तालाप का स्थान तभी ले सकते हैं जब भेजने वाले और पाने वाले के बीच कोई तीसरा व्यक्ति न हो। माध्यम के होने पर पत्र की सहजता और सहृदयता अनौपचारिकता के कारण नष्ट हो जाती है। तब पत्र केवल औपचारिक संदेश बनकर रह जाता है।

मेरे विचार से सभी पत्र अनौपचारिक और निजी नहीं हुआ करते। बहुत से पत्र खुले तौर पर सार्वजनिक भी होते हैं। ये वास्तव में किसी व्यक्ति या अधिकारी, सम्बंधी को सम्बोधित होने चाहिए किन्तु पत्र लेखक का उद्देश्य यही रहता है कि इन्हें वह पढ़ सके। इस प्रकार के पत्रों में विषय या समस्या का विवेचन, मूल्यांकन या भाव होता है।

राष्ट्रकवि स्व. मैथिलीशरण गुप्त ने 'शकुन्तला का पत्र लेखन' शीर्षक से एक कविता लिखी थी। इसी में रवि वर्मा के चित्रों का प्रतीकात्मक परिचय भी दिया गया है। इससे पूर्व जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' ने 'टूटा हार' नाम से पत्र नीति लिखा था, जो चाँद पत्रिका के 6 अक्तूबर 1927 के अंक में प्रकाशित हुआ था। इस पत्र में ही कहानीकार विश्वम्भर नाथ शर्मा कौशिक की 'दूबे की चिट्ठी' नाम से एक प्रमुख रचना भी प्रकाशित हुई थी।

अभी तक हिन्दी में बहुत कम पत्र साहित्य प्रकाशित हुआ है, फिर भी छायावाद काल में बहुत-सी कविताएँ प्रेम व्यंजना और आत्मा-परमात्मा के परिप्रेक्ष्य में अवश्य लिखी गई हैं। हिन्दी के पत्र साहित्य में स्व. बालमुकुन्द गुप्त का नाम सर्वाधिक चर्चित रहा है। पत्र साहित्य में यह कार्य पूर्ण मौलिक तथा साहसिक माना जाता है। आज़ादी से पूर्व भारत के वायसराय लार्ड कर्ज़न जिनका कार्यकाल 1899 से 1905 तक लगभग सात वर्ष रहा। लार्ड कर्ज़न के निरंकुश, स्वेच्छापूर्ण शासन के विरोध में बालमुकुन्द गुप्त ने 'शिवशंभु शर्मा' के कल्पित नाम से कलकत्ता से प्रकाशित 'भारत मित्र' समाचार पत्र में व्यंग्यपूर्ण शैली में एक धारावाहिक पत्र लिखा, जो कि कर्ज़न के अहंकार के उग्र रूप पर सांकेतिक प्रहार के रूप में चर्चित रहा। अन्त में ये पत्र पुस्तक रूप में 'शिवशम्भु शर्मा के चिट्ठे और ख़त' के रूप में प्रकाशित हुए। इसमें कुल आठ चिट्ठियाँ हैं। जैसे बनाम लार्ड कर्ज़न, श्रीमान का स्वागत, वैसराय के कर्तव्य, पीछे मत फेंकिए, आशा का अंत, एक दुराशा, विदाई सम्भाषण, बंग विच्छेद आदि। ये चिट्ठियाँ पूरे वर्ष 1904 से 1905 तक 'भारत मित्र' और ज़माना पत्र में प्रकाशित होती रहीं, जिनका पाठकों और जनता पर देश व्यापी प्रभाव पड़ा। भारत मित्र का प्रकाशन काल 1899 से 1907 तक रहा। प्रायः गुप्त जी कहा करते थे कि 'भारत मित्र का सम्पादक मौन रहना सीखा ही नहीं है।'

बाल मुकुन्द गुप्त इसके संपादक थे। आपने ही साहित्यकारों का समीक्षात्मक परिचय लिखने का सूत्रपात किया था। आप हरियाणा के रोहतक जिले के गुड़ियाना गाँव के थे। आपकी मृत्यु दिल्ली में 18 सितम्बर 1907 को हुई।

मुझे इस बात का गर्व है कि जब मैं 1957 से 1961 तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय में छात्र था तब ये पुस्तक हिन्दी पाठ्यक्रम में पढ़ाई जाती रही। 'शिव शम्भू शर्मा के चिट्ठे और ख़त' नामक इस कृति का अंग्रेजी भाषा में श्री ज्योतिनाथ बैनर्जी ने अनुवाद कर पुस्तक रूप में प्रकाशित कराया था, जो कि तत्काल पाठकों ने क्रय करके प्रकाशन को उच्च शिखर पर पहुँचाने में सहायता की।

तत्कालीन राजनीतिक चेतना के सजीव इतिहास के रूप में व्यंग्यपूर्ण चुटीली-पैनी शैली में लिखे गए ये चिट्ठे और पत्र, आज तक अजय माने जाते हैं और हिन्दी साहित्य में सदैव अमर रहेंगे।

पत्र साहित्य में भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के अपनी पुत्री स्व. इन्दिरा गाँधी को लिखे पत्र 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' लोकप्रिय कृति मानी जाती है। इसी श्रृंखला में द्विवेदी पत्रावली सम्पादक बैजनाथ सिंह विनोद, पद्म सिंह शर्मा के पत्र, सम्पादक बनारसी दास चतुर्वेदी भी साहित्य की महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। चतुर्वेदी जी पत्र लिखने में कुशल तथा सिद्धहस्त माने जाते हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने अपने जीवनकाल में लगभग पच्चीस हज़ार पत्र लिखे थे जो कि दिल्ली के गाँधी स्मारक निधि द्वारा एकत्रित करके प्रकाशित किए गए हैं। गाँधी वाङ्मय में इसका पूर्ण संकलन मिलता है।

वस्तुत: पत्रों में पूर्ण भावना अन्तर्निहित होनी चाहिए और शैली की दृष्टि से इसे सच्चा, सरल, संक्षिप्त और सहज होना चाहिए। पत्र बोझिल और उबाऊ नहीं होने चाहिए।

सन! 1987 में अपनी विश्व यात्रा के दौरान अन्तिम राष्ट्र फीजी में मुझे एक प्रवासी भारतीय महिला कुन्ती की करुण कहानी सुनने को मिली जो कि गोरखपुर के लखुआपुर की रहने वाली थी। अरकाटी दलालों के वाक्जाल में वह अपने पति सहित फंसकर गिरमिटिया श्रमिक के रूप में फीजी पहुँच गई थी। उस समय उसकी अवस्था 20 वर्ष की थी। अंग्रेज ओवरसियर, जिसे वहाँ की भाषा में 'कोलम्बर' कहा जाता था, की कुदृष्टि उस पर पड़ी और वह उसे अनेक प्रकार से परेशान करने लगा। एक दिन खेतों में अकेले काम करती हुई कुंती को कोलम्बर ने दबोच लिया, किन्तु बहादुर भारतीय नारी अपने सतीत्व की रक्षा करते हुए पास ही बहती नदी में कूद पड़ी और अपनी इज्ज़त बचाई। इस घटना को कुंती ने तत्काल सन् 1905 में अपने परिचित सहयोगी जयदेव से लिखवाकर कलकत्ता से प्रकाशित 'भारत मित्र' में भिजवा दिया, जिसके प्रकाशन से भारत में तहलका मच गया। भारत में इसकी चतुर्दिक चर्चा हुई। इस सम्बंध में फीजी में एक लोकगीत प्रचलित है, जिसमें में कहा गया है-

'सतियों का धर्म डिगाने को जब
अन्याइयों ने कमर कसी,
जल अगम में कुंती कूद पड़ी,
पर पार बही, मंझधार नहीं।
अत्याचार की चक्की में
पिसकर भी धर्म नहीं छोड़ा।
हिन्दूपन अपना खो बैठे,
भारत के वीर गंवार नहीं।
इस पतन को कुछ तो याद करो,
हर कुंती का जीवन सफल रहे
बिन धर्म धारण किए
सुख शान्ति का संचार नहीं।
भारत के वीर गंवार नहीं।।

धन्य है भारत की नारी कुंती जिसने अपनी इज्जत बचाई और फीज़ी में भारत की नारियों का सिर ऊँचा किया, इसलिए मैं तो कुंती को विश्व का प्रथम प्रवासी हिन्दी संवाददाता मानता हूँ।

साहित्यिक पत्र लेखन में स्व. कैलाश चन्द्र भाटिया, वियोगी हरि, बनारसी दास चतुर्वेदी, विष्णु प्रभाकर, फादर कामिल बुल्के प्रवीण थे। इन विद्वानों में कुछ पत्र मेरे संग्रह में अब भी सुरक्षित हैं। यथार्थ में पत्र-साहित्य अन्तर्मन और सहज प्रवृत्ति से लिखे जाते हैं जो कि हिन्दी साहित्य के साधारण प्रसंग को भी श्रेष्ठता से उत्तुंग पर पहुँचाने के साधन और प्रमाण होते हैं।

***

-बड़ा बाजार, अमरोहा,
मो. 9412633194

चिन्नी-डॉ. सरोजनी कुलश्रेष्ठ

अमित जब केवल पाँच वर्ष का था, उसका परिचय साँप से हो गया। हुआ यह कि एक दिन वह घर के अन्दर वाले पेड़ के नीचे घूमता हुआ पहुँच गया। वहाँ घास में साँप घूम रहा था। उसे बड़ा कौतुहल हुआ। पहले तो पत्थर मार-मार कर उसने उसे मार दिया फिर एक डंडी पर लटका कर माँ को दिखाने आया। देखो माँ कैसी हरी-हरी रस्सी है। माँ ने देखा तो उसकी चीख निकल गई, ''अरे, यह तो साँप है, छोड़ दो इसे।''

''यह तो मर गया है, अब तो यह रस्सी है।'' माँ ने आग्रह करके उसे बाहर फिंकवा दिया। बहन सीता ने कहा,

''यह रस्सी काट खाती है भैया, तो आदमी मर जाता है।'' बात आई-गई हो गई।

एक दिन अमित आँगन में बैठा हुआ भोजन कर रहा था। थोड़ी देर में पेड़ से उतर कर एक गिलहरी वहाँ आई। अमित ने उसकी तरफ रोटी का टुकड़ा फेंक दिया। गिलहरी ने टुकड़ा उठाया और दोनों हाथों में लेकर लेकर खाने लगी। अमित को उसका इस तरह हाथ फैलाकर खाना बड़ा अच्छा लगा। अब तो वह कई टुकड़े फेंक कर तमाशा देखता। उसके एक बार के फेंके टुकड़े को खाकर गिलहरी बार-बार उसके पास आने लगी। वह भी जान-बूझकर रोज आँगन में ही बैठ कर भोजन करने लगा। इस गिलहरी की पीठ पर उसने धीरे से स्याही डाल दी थी। इसलिए वह उसे पहचान जाता था। वह भी अमित के बैठते ही आ जाती थी। अमित ने उसका नाम रखा था—'चिन्नी'।

रविवार के दिन अमित का एक मित्र मनोज आया हुआ था। उसने चिन्नी गिलहरी का खेल देखा तो कहने लगा, ''हाँ अमित तुमने सच ही कहा था। यह एक बच्चे की तरह दोनों हाथों को फैलाकर खाने की चीज खाती है। यह क्या? ये नीले धब्बे इसकी पीठ पर कैसे हैं? क्या ये पहले से ही थे।''

''नहीं, मैंने पहचान के लिए स्वयं इसकी पीठ पर डाले हैं। यही गिलहरी बार-बार मेरे पास आती है। इससे मेरी पहचान हो गई है। या ये कहो, पल गई है। मुझे बहुत अच्छी लगती है। इसका नाम चिन्नी है।''

''अच्छा अमित! क्या तुम बता सकते हो कि इसकी पीठ पर ये धारियाँ कैसे बनीं?''

''नहीं मुझे नहीं मालूम। मुझे तो बस ये धारियाँ अच्छी लगती हैं, जैसे किसी ने अपनी अंगुली से जानबूझ कर बना दी हों। एक बात हो सकती है, चलो अपनी बूढ़ी बुआ जी से पूछते हैं। वे जरूर जानती होंगी।''

''हाँ! चलो,'' मनोज ने कहा।

दोनों ही बुआजी के पास पहुँच कर धारियों का रहस्य जानने का आग्रह करते रहे। पहले तो उन्होंने टाल-मटोल की फिर कुछ इस तरह बताया, ''देखो बेटा, गिलहरी वाली कहानी पता नहीं किसने कब लिखी है। हम तो बचपन से ही सुनते आ रहे हैं। जब नल-नील ने अन्य बन्दरों के साथ मिलकर रामेश्वरम् से लेकर लंका तक पुल बनाने का कठिन कार्य किया तो एक गिलहरी थी जो उपने मुँह में एक तिनका दबाकर उनकी सहायता करने वहाँ आ गई।''

यह सुनकर मनोज खूब हँसा और बोला, ''एक तिनके से क्या होता है, वहाँ तो पत्थर उठाने थे, बुआ।''

बुआ भी हँसने लगी फिर गम्भीर हो गई, कहने लगी, ''बेटा हँसने की बात नहीं है। यह तो अपनी ताकत के अनुसार होता है। जब कोई सहयोग देता है तो उसकी सामर्थ्य नहीं उसका उत्साह देखा जाता है। तुम छोटे बच्चे हो, तो अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही तो काम करोगे, बड़ों की तरह थोड़े ही कर सकोगे।''

दोनों मित्र एक दूसरे की ओर देखने लगे। फिर बोले, ''अब बुआ जी यह बताइए कि ये धारियाँ गिलहरी की पीठ पर कैसे बन गईं?''

''हाँ! यही तो बात है। गिलहरी में छोटे होने पर भी बड़े काम का उत्साह था। यह देखकर श्री राम बहुत प्रसन्न हो गए। उन्होंने आशीर्वाद दिया और उसकी पीठ पर प्यार से अपनी अंगुलियाँ फेरीं। बस तभी से गिलहरी की पीठ पर ये धारियाँ बन गईं।''

''वाह बड़ा मजा आया।'' दोनों कहने लगे। मनोज को नींद आने लगी थी तो न जाने वह कब पेड़ के नीचे घास में सो गया। अमित खाना खाने बैठा तो मनोज को आवाज दी वह नहीं आया तो अमित थोड़ी देर वहीं बैठा रहा। अचानक वही स्याही से रंगी चिन्नी गिलहरी वहाँ

आई। आज उसने रोटी नहीं माँगी, हाथ नहीं फैलाया, वरन् आवाज करने लगी। वह बार-बार पेड़ के ऊपर चढ़ती, उतर कर अमित के पास आती और बेचैन सी फिर पेड़ पर चढ़ जाती।

यह देखकर अमित उठ कर पेड़ के नीचे आया तो वहाँ मनोज को घास पर सोते हुए पाया। वह उसे जगाने के लिए आवाज देना चाहता था, तब तक उसने घास में एक साँप सरकता हुआ देखा।

मनोज गहरी नींद में सो रहा था। वह क्या करे, पहले तो उसने उस साँप को वहीं पेड़ की डण्डी तोड़कर मारा। फिर उसके बाद मनोज को जगाया। मनोज सहज रूप से जागकर खड़ा हो गया, तब अमित ने कहा, ''तुम्हें मालूम है, हमारी चहेती नीले छीटों वाली चिन्नी गिलहरी ने ही तुम्हें बचाया है, नहीं तो साँप तुम्हें काट खाता फिर क्या होता? तुम नहीं समझ सकते। मैं तो बचपन से साँपों का शिकारी हूँ पर तुम तो बच्चू, चपेट में आ ही जाते।'' मनोज कभी चिन्नी को तो कभी मरे हुए साँप को देखता रहा।

***

-सी 56, सेक्टर 40, नोएडा

"स्वतंत्रता दिवस"

के शुभ अवसर पर

आँचल परिवार की हार्दिक शुभकामनाएँ

''शुद्धता एवं गुणवत्ता का प्रतीक''

"आँचल"

हमारे उत्पाद

आँचल स्टैण्डर्ड दूध, आँचल टोण्ड दूध, आँचल डबल टोण्ड दूध, आँचल जनता दूध, आँचल घी, आँचल मक्खन, आँचल पनीर, आँचल दही, योगर्ट (फलयुक्त दही), मट्ठा (मसालायुक्त), छांछ, चीज़ प्लेन/फ्लेवर एवं छेना खीर।

(सी. डी. त्यागी)
सामान्य प्रबंधक

(रवीन्द्र सिंह रैकुनी)
उपाध्यक्ष

(संजय सिंह किरौला)
अध्यक्ष

सदस्य प्रबंध कमेटी:- श्री कर्णवीर सिंह, श्री सुरेंद्र प्रताप, श्री मुकेश बोरा, श्री भरत नेगी, श्री सुरेश चन्द्र आर्या, श्रीमती चम्पा रैक्वाल, श्री दयाकिशन बमेटा, श्री भूपेंद्र सिंह बिष्ट (सहायक निदेशक), श्री पी.सी. शर्मा, (सामान्य प्रबंधक)

(आई.एस.ओ. 9001-2008) एवं फूड सेफ्टी मैनेजमेंट सिस्टम (आई.एस.ओ.2200:2005) प्रमाणित संस्था

ग्राहक सेवा हेतु टोल फ्री. नम्बर 18001804090

टूटते घेरे-शमा ख़ान

ट्रेन समय पर आ गई और तबस्सुम शीघ्रता से फर्स्ट ए.सी. केबिन में दाखिल हो गई। चार सीटों वाले कूपे में एक युवती और एक अधेड़ व्यक्ति बैठे थे। उन्होंने तबस्सुम के आने का नोटिस नहीं लिया। युवती लेपटाप पर नज़रें जमाए और पुरुष अंग्रेज़ी नावेल पढ़ने में तल्लीन रहे। तबस्सुम पसीना पोंछकर मोबाइल पर मैसेज टाइप करने लगी। हाई क्लास सोसाइटी कल्चर्ड इंसानों के बीच बैठे होने पर भी संवादों का रेगिस्तान फैला होता है। अपने-अपने मर्तबे और हैसियत से लबालब इगो मुँह पर उंगली रख देती है। थर्ड ए.सी. या स्लीपर क्लास के मुसाफिर वार्तालाप की कोई न कोई वजह तो निकाल ही लेते हैं।

कूपे में सिर्फ़ ट्रेन की धड़धड़ाती आवाज़ गूँज रही थी। उबाऊ और बोझिल वातावरण में तबस्सुम की बैठे-बैठे ही आँख लग गई।

रात के साढ़े आठ बजे केट्रिन वाले की भारी- भरकम आवाज़ से नींद खुली। युवती और अधेड़ पुरुष को खाना खाते देखकर भूख न होने पर भी तबस्सुम को अपना टिफिन खोलना पड़ा। खाना खत्म करके पेपर नेप्किन से हाथ पोंछती हुई युवती ने पूछा, ''एक्सक्यूज़ मी मैम! व्हिच सीट इज़ योर्स?''

''दिस इज़ माईन।'' तबस्सुम ने नीचे वाली बर्थ की तरफ इशारा किया।

''ओके। दैन आई विल टेक अपर बर्थ।'' फिर तीनों मुसाफिर अपनी सीटों पर बेडिंग बिछाने लगे। थोड़ी देर के लिए केबिन में हलचल-सी रही। पुरुष ने हाथ का स्पोर्टिंग बेल्ट गले से उतार कर रख दिया और कम्बल ओढ़कर लेट गया। लड़की किसी को फोन पर बतला रही थी, ''यस...यस, ट्रेन बारह बजे पहुँचेगी। आप गाड़ी भेज दीजिएगा। थैंक्यू व्हेरी मच।'' बारह बजे रात तक कूपे में लाइट जलती रही। अधेड़ और तबस्सुम अपनी-अपनी सीटों पर करवटें बदलते रहे।

सुबह देर से नींद खुली। लड़की उतर चुकी थी। पुरुष मुसाफिर हाथ में स्पोर्टिंग बेल्ट डाले ट्रेन के साथ दौड़ते नज़ारों में गुम थे। तबस्सुम बाथरूम से लौटी तो उन्होंने पहली बार मुँह खोला, ''मैम, आपका फोन बज रहा था।''

''थैंक्यू सर।'' कहकर वह कॉलबैक करने लगी।

''ट्रेन शायद लेट हो गई है।''

''दिल्ली कितने बजे पहुँचेगी?''

''राइट टाइम तो दस बजे का है, देखिए कितने बजे पहुँचाएगी।'' उनका मौन टूटा। इकहरी कदकाठी के सौम्य चेहरे वाले मुसाफिर साथी दक्षिण भारतीय लग रहे थे।

''आप कहाँ तक जाएँगी?''

''जी, देहरादून और आप?''

''मैं ऋषिकेश जाऊँगा। मैं दिल्ली उतर कर तीन बजे वाली ट्रेन पकडूँगा।''

''मेरा भी उसी में रिजर्वेशन है।''

''दैट्स गुड।''

उल्टे हाथ से उन्हें चाय पीते देखकर तबस्सुम ने पूछा, ''आपके हाथ में क्या हो गया?'' मानवीय संवेदना के तार जुड़ने लगे।

''बेंक रिक्रुमेंट के वास्ते इंटरव्यू लेने रायपुर गया था। आटो पलट गया..हाथ का फ्रैक्चर हो गया। स्टील राड लगी है।'' बातों का सिलसिला शुरू हुआ तो पता चला वे बैंक मैनेजर के पद से रिटायर हुए हैं। उत्तराखण्ड में ही पले-बढ़े। यहाँ की दिलकश आबोहवा, सादगी, निश्छलता ने ऐसा बाँधा कि केरल का पैत्रिक मकान बेचकर ऋषिकेश के ही होकर रह गए।

ट्रेन निजामुद्दीन स्टेश पर थमने लगी। ''आप नीचे उतर जाइए। मैं सामान लाता हूँ।''

''लेकिन आपका हाथ....कैसे उठाएँगे सामान...दर्द बढ़ जाएगा।'' तबस्सुम की मानवीय संवेदना चिंतित हो गई।

''दूसरा हाथ तो सलामत है न।'' उल्टे हाथ से सूटकेस उठाते हुए हल्के से मुस्कुराकर बोले।

नई दिल्ली फर्स्ट क्लास वेटिंगरूम में पहुँचकर एक-एक लम्बी कुर्सी पर दोनों बैठ गए। पता नहीं किस जात, किस भाषा, किस धर्म का है ये शख़्स? भूख लगी थी...तबस्सुम ने झिझकते हुए पूछ लिया, मेरे पास लंच है...अगर आपको ऐतराज़ न हो तो साथ ही खाना खा लेते हैं।''

''श्योर।'' कहकर वे हाथ धोने चले गए।

खाना खाते हुए मुसाफिर साथी ने स्वाभाविक जिज्ञासावश पूछ लिया, ''देहरादून में कौन-कौन रहता है?''

''मेरे दो बेटे और उनकी फेमिली।'' कुछ देर चुप्पी के बाद तबस्सुम ने पूछा, आपकी फमिली में कितने मेंम्बर हैं?''

''मैं अकेला ही रहता हूँ। बेटी की शादी हो गई है। वाइफ़ ने डाइवोर्स ले लिया।'' उन्होंने बेझिझक अनजान महिला के सामने अपने जीवन के नितान्त व्यक्तिगत पन्ने खोल कर रख दिए।

''डाइवोर्स क्यों हो गया?''

''बैंक, जहाँ भी नई ब्राँच खोलता था उसे स्टेबिल करने के लिए मुझे भेज देता। पाँच साल में छः ट्रान्सफर। बार-बार के सेटलमेंन्ट से वाइफ से ज़्यादा उसकी माँ परेशान हो गई थी। मेरठ से बरेली ट्रान्सफर पर....शराबी ट्रक ड्राइवर ने होटल के वेटर से मारपीट कर दी नतीजतन गाँव वालों ने हमारी पूरी गृहस्थी लूट ली। मिसेज़ ने कोहराम मचा दिया। सामान ही तो है, दुबारा खरीद लेंगे। मैंने समझाने की कोशिश की लेकिन इंसानी रिश्तों और भावानाओं से ज़्यादा भौतिक बेजान वस्तुओं को अहमियत देने वाली ने डायवोर्स पेपर भेज दिए।

''दूसरी शादी क्यों नहीं की?''

''दूसरा रिस्क उठाकर जिन्दगी को और मुश्किल नहीं बनाना चाहता था।''

''फिर कैसे मैनेज करते हैं अकेले?''

''कुक साथ ही रहता है। दूसरे काम खुद ही कर लेता हूँ। पच्चीस साल हो गए हैं....अब तो आदत हो गई है।'' बरसों की त्रासदी, अपनों की बेरुखी, अकेलेपन का ज़हर पीकर भी उन्होंने अपनी तबाही के लिए किसी को दोषी नहीं ठहराया।

''मैम आपके हस्बैण्ड?''

''पुलिस में थे। डाकुओं के साथ मुठभेड़ में मारे गए। बच्चे बहुत छोटे थे। मम्मी-पापा ने सम्भाला मुझे.... पागल-सी हो गई थी मैं। दूसरी शादी के लिए बढ़ते सामाजिक दबाव ने मुझे भविष्य की खातिर अण्डमान एडमीनिस्ट्रेशन पहुँचा दिया।''

देहरादून वाली ट्रेन का एनाउन्समेंट हो गया था। एक ही कम्पार्टमेंट में हमारी दोनों की सीटें आगे-पीछे की सीटें थीं। वे हर स्टेशन पर तबस्सुम से कोल्डड्रिंक्स और स्नेक्स के लिए पूछते रहे। छत्तीस घण्टों में एक बार भी उन्होंने तबस्सुम का नाम पता जानने की कोशिश नहीं की। खाना, दर्द, आरामदेह सुरक्षित साथ का अहसास एक दूसरे के सानिध्य में बाँटा दो इंसानों ने। सच! इंसानी रिश्ते भाषा, मजहब, जाति, वर्ग की परिधियों में कहाँ बाँटे जा सकते हैं। ये तो विस्तृत विशाल हृदय की सहज उपज है, वो आत्मीयता की फसल उगाते हैं।

हरिद्वार स्टेशन पर उतर कर उन्होंने अपना विजटिंग कार्ड थमा दिया, ''मेरे नम्बर पर मिस कॉल दीजिएगा। मेरा फोन अटेंड करेंगी न आप?'' एक भीगा-सा अहसास उन दोनों अजनबियों के बीच तैर गया।

ट्रेन के चलते ही तबस्सुम ने कार्ड को ऊपर से सिर्फ फोन नंबर फीड करके नाम की जगह लिखा इंसान। देखकर धर्म निरपेक्षता ठहाका लगाकर हँस पड़ी और धर्म, भाषा, जाति, लिंग की संकीर्णता अपने ही खोल में मुँह छुपाने लगे।

-6/2, केवल विहार, सहस्रधारा रोड,
देहरादून, मो. 9457473765

मठरी

लालाजी ने मठरी खाई,
संग चाय के खूब चबाई
कड़-कड़ आवाज सुनाई,
मुँह की हो गई पूर्ण सफाई
दाँत बनावट के थे जितने,
गटक गये लालाजी उतने
पेट पकड़कर रात बिताई,
रहे जागते नींद ना आई
डॉक्टर पास गये ट्रेक्टर पर,
लिटा दिये वन्टीलेटर पर
नौवत ऑपरेशन की आई,
डॉक्टर की बुद्धि चकराई
पेट चीरकर देखी आँत,
उसमें निकले ग्यारह दाँत
लाला हुए सूखकर ठठरी,
महंगी बहुत पड़ गयी मठरी
जान बची तो लाखों पाये,
लौट के लाला घर को आये ।।

***

सत्य पाल सिंह 'सजग'
ए4/159 सेन्चुरी पल्प एण्ड पेपर लालकुआँ
नैनीताल (उत्तराखण्ड) मो. 941232961

कलकत्ते का तूने जिक्र किया.....महानगर कोलकाता-डॉ. सेराजख़ान बातिश

`भारत दर्शन' का प्रारम्भ हमने उत्तराखण्ड राज्य के परिचय से किया। हमारी चेष्टा रहेगी कि शैल-सूत्रा के पाठकों को किसी भी राज्य का अधिक से अधिक और सुरुचिपूर्ण परिचय हम दे सकें। आशा करते हैं कि हमारे सुदि पाठकों के लिए यह सामग्री रोचक और ज्ञानवर्धक होगी। पिछले अंकों में हमने उत्तराखण्ड का भौगोलिक, सांस्कृतिक, तीर्थ एवं पर्यटन का परिचय दिया, जिसमें थारु जनजाति का परिचय विशेष था। उत्तराखण्ड के कुछ सुप्रसिद्ध व्यक्तित्वों के द्वारा छेड़े गए सल्ट आन्दोलन एवं स्वतंत्राता संग्राम की अग्रणी नारीशक्ति एवं लेखक पत्राकारों के, पर्वतीय संस्कृति और लोकवाद्यों बारे में और मन्दिरों के बारे कुछ जाना। इतना कुछ है हमारे पास जानने के लिए कि लगता है अभी तो कम जाना। आश्चर्य की बात नहीं है कि हिन्दी भाषा के साथ-साथ यहाँ पर कुमाउँनी भाषा में साहित्य रचने वालों की भी कमी नहीं रही। उत्तराखण्ड के लोककवि `शेरदा' अनपढ़ के बारे में कुछ में जाना। आपने पूर्वोत्तर के प्रान्त आसाम और हिमाचल के दूर-दराज़ गाँवों के बारे में जाना। हम देश के विभिन्न भागों पर कुछ तथ्यपूर्ण सामग्री प्रस्तुत कर रहे हैं। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह जानकारी मनोरंजन के साथ ही कहीं न कहीं हमारे, आपके, विद्यार्थियों अथवा पर्यटकों के लिए बहुत काम की सिद्ध होगी। -आशा शैली

भारत के चार महानगरों में कलकत्ता महानगर का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह अंग्रेज़ों का प्रिय शहर भी रहा है। अंग्रेज़ों ने अपनी सत्ता का प्रारम्भ यहीं से किया थ।1858 से 1912 तक कलकत्ता देश की राजधानी रहा है। उन 54 वर्षों में कलकत्ता की शान-व-मान वैभव देखते ही बनता था। उस समय यह महानगर सानिए इंग्लैण्ड था। यह वह समय था जब इस महानगर की सड़कें सुबह-शाम धुला करती थीं।

17वीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध में जॉब चारनक ने गोविंदपुर, सुतानीति और कालिकाता को सुवर्ण राय चौधरी से सालाना 1300 रुपए पट्टे पर लेकर आज के कलकत्ते की नींव रखी थी।

समय के साथ यह महानगर भी बहुत बदला है। सरकारों ने अपने तौर-तरीके से इस महानगर को संचालित किया, इसे सजाया-संवारा।

हावड़ा स्टेशन महानगर का मुख्यद्वार है। अब तो इसमें प्रवेश करने के बहुत सारे साधन और मार्ग हो गए हैं। वैसे तीन-सौ वर्ष पुराने इस शहर का कायाकल्प तो समय-समय पर होता रहता है, लेकिन कलकत्ते में जो अंग्रेज़ियत की खुशबू है, वह अभी तक है। यहाँ बांग्ला भाषियों का प्रभाव होने के बावजूद अंग्रेज़ी यहाँ की सरकारी भाषा है। सड़क पर, रास्तों पर अंग्रेज़ी में लिखे सूचना पट्ट मिलेंगे। इस शहर का मिज़ाज बड़ा सेकुलर है। अगर दंगे का इतिहास देखा जाए तो कलकत्ते में देश के अन्य राज्यों की तुलना में सबसे कम दंगे हुए हैं।

बंगाल की खाड़ी से 120 किमी. दूर हुगली नदी के तट पर बसा कलकत्ता आज विकास की नई हदें पार कर चुका है। कलकत्ता से कोलकाता में तब्दील यह महानगर आज जॉब चारनक की याद से बहुत दूर होता जा रहा है। हद तो यह है कि किसी ने यह तक सिद्ध कर दिया है कि इस ऐतिहासिक महानगर के संस्थापक जॉब चारनक नहीं। शोधकर्ता ने किसी बंगाली मोशाय को ही कलकत्ता के संस्थापक के रूप में खोज निकाला है।

अगर आप कलकत्ता देखना चाहते हैं तो इसका मुख्य आकर्षण विक्टोरिया मैमोरियल है, जिसे महारानी विक्टोरिया के पुत्र ने ताज महल के नक्शे के आधार पर बनाना चाहा था। उसकी इच्छा थी कि उसकी माँ की स्मृति में यह स्मारक ताज महल से होड़ ले सके, लेकिन ऐसा नहीं हो सका। फिर भी विक्टोरिया मैमोरियल एक अद्भुत इमारत है। इसे ज़रूर देखना चाहिए।

इस ईंट-कंक्रीट के शहर में एक हरी घास की खुली पट्टी है जो ठीक रेसकोर्स की सहोदरा है। इस पट्टी-मैदान को धर्मतल्ला या इस्प्लानेड मैदान कहते हैं। पहले शहर की तमाम हलचल को यही मैदान अपने सीने पर झेलता था। शहर की धूल-गंदगी-बेहुदगी, इसी मैदान के सिर अंजाम पाती थी। इस मैदान की सीमा आज बहुत सिमट गई है। रेस कोर्स से सटा यह लम्बा मैदान, ब्रिगेड परेड ग्राउण्ड है जो वास्तव में शहर के लिए एक प्रकार से आक्सीजन का काम करता है। अगर यह मैदान न हो तो शहर का दम घुट जाए। जब इस्प्लानेड से होता हुआ ट्राम टुनटुन करता हुआ परेड ग्राउण्ड मैदान के किनारे-किनारे

विक्टोरिया मैमोरियल

रोड से गुजरता है तो यह मंजर देखते ही बनता है। थोड़ी दूर पर सफ़ेद पत्थरों से निर्मित पेड़ों और हरी झुरमुटों से झाँकता विक्टोरिया मैमोरियल का यह दृश्य किसी को भी अपनी ओर खींच सकता है। कभी रेसकोर्स में दौड़ते घोड़ों को ट्राम में बैठे लोग देख कर रोमांचित होते हैं तो कभी मैदान में तरह-तरह के खेल-खेलते बच्चे-युवाओं को देख अपने अंदर के युवा को टटोलने लगते हैं लोग। हाँ! किसी-किसी के ज़हन में घोड़ों द्वारा ट्राम खींचने की याद आज भी ताजा है।

शहीद मीनार महानगर का प्रतीक है। कुछ ही समय पहले तक मीनार पर चढ़कर शहर-चौरंगी के नज़ारे को देखा जा सकता था, लेकिन अब उस पर चढ़ना प्रतिबंधित हो गया है।

अलीपुर में दो ख़ास स्थान देखने योग्य हैं। एक बुद्धिजीवियों का राष्ट्रीय पुस्तकालय है और दूसरा मनोरंजन और पशु-पक्षी प्रेमियों के लिए भारत का सबसे बड़ा चिड़ियाघर है, जो ज्योलॉजिकल गार्डन है। उसी के सामने 'ताज बंगाल' सीना ताने खड़ा है, जहाँ देश-विदेश के सम्पन्न पर्यटक आकर ठहरते हैं।

एक अद्‌भुत दर्शनीय स्थल तारामण्डल भी है, जहाँ चार भाषाओं में सौर-चन्द्र मण्डल व आकाशीय हलचलों को देखा जा सकता है। नेहरू चिल्ड्रेन म्यूज़ियम, बिरला इंडस्ट्रियल म्यूज़ियम, अकादमी ऑफ फाइन आर्ट्स, रवीन्द्र सदन, नन्दन, सीटीन पार्क, मिलेनियम पार्क, इंडेन गार्डन, जेटी औट्रमघाट, हार्टिकल्चरल गार्डन आदि कुछ ऐसे दशनीय स्थान हैं जो शहर में आने वाले हर आगंतुक के लिए आकर्षण के केंद्र हैं, जिससे महानगर हरा-भरा सदाबहार एवं प्रफुल्लित रहता है। इस हलचल भरे शहर, भीड़-भाड़ से लदे हुए, उमस से भरे हुए लोगों को पल भर के लिए राहत प्रदान करते हैं। सुकून देते हैं।

यह ऐतिहासिक नगर धर्मनगरी भी है। आस्था और विश्वास की भी जड़ें इस महानगर में गहरी हैं, तभी तो चर्चों, गिरिजाघरों, मन्दिरों, मस्जिदों से नगर का गली-कूचा आबाद है, जिनमें ख़ास हैं, कैथेड्रिल चर्च, नाखुदा मस्जिद और कालीघाट का काली मन्दिर। इन सब पूजा-स्थलों का भी ऐतिहासिक महत्व है। कालीघाट का काली मन्दिर कलकत्ते के निर्माण से भी पूर्व से स्थापित है। नाखुदा मस्जिद यानि मल्लाहों द्वारा निर्मित एक ऐतिहासिक मस्जिद है। ये सभी स्थान महानगर के सौहार्द के प्रतीक हैं। इस सेक्यूलर, उदार राज्य में ये पूजा-स्थल भी उतने ही उदार और सेक्यूलर हैं। बाहर से आने वाले हरेक जाति-धर्म के लोगों का स्वागत ये धर्म-स्थल करते हैं।

हावड़ा ब्रिज

यह शहर जितना अंग्रेज़ों को प्रिय था उतना ही उर्दू के महान शायर मिर्ज़ा ग़ालिब को भी पसंद था। ग़ालिब यहाँ अपनी पेंशन के सिलसिले में आए थे और करीब पाँच महीने तक यहाँ रहे। उनकी यहाँ के शायरों से मुठभेड़ भी हुई, फिर भी ग़ालिब को यह शहर, इसकी संस्कृति, यहाँ के लोग, प्रिय लगे और उन्होंने कहा,

''कलकत्ते का तूने जिक्र किया मेरे हमनशीं,
इक तीर दिल पे मारा कि मारा कि हाय-हाय।'' यह हाय-हाय उनके कलकत्ते के प्रति प्रेम और सद्‌भाव का सूचक है। आप भी कलकत्ते कभी आइए।

***

3-बी. बंगाली शाहवारसी लेन,
दूसरा तल, फ्लैट नं.-4, खिदिरपुर,
कोलकाता-700023
मो. 09339847198

समाज को दिशा देता एक उपन्यास- डॉ. सुशील कुमार

पुस्तक:-गूँजते खण्डहर (उपन्यास)
प्रकाशक:-सूर्यप्रभा प्रकाशन, 2/9, अंसारी रोड,
नई दिल्ली, 011-23285915, 43488736
लेखक:-डॉ. महेंद्र शर्मा सूर्य,
पृष्ठ:-104, -मूल्य:-250/-

'गूँजते खण्डहर' मुख्यत: एक पूर्वजन्म की कथा पर आधारित उपन्यास है। लेखक ने इसकी कथा-वस्तु को बड़े ही सुन्दर ढंग से चित्रित किया है। इसमें प्रकृति-चित्रण अनूठा है। शहर का वातावरण भी यथा-संभव सुन्दर प्रतीत होता है। कहानी का नायक बहुत निर्भीक, साहसी और जीवन में आने वाली हर कठिनाई से जूझने को तत्पर है। उसके हृदय में स्त्री के प्रति प्रेम व आकर्षण अवश्य है किन्तु वासनात्मक आसक्ति नहीं है। वह पूर्वजन्म में भी गंगा (पूर्वजन्म की प्रेयसी) से प्रेम तो करता है किन्तु उस प्रेम में वासना दृष्टगोचार नहीं होती और न ही दूसरे जन्म में डाक्टर सुधीर के चरित्र में ही वासनात्मक स्त्री-मोह दिखाई पड़ता है।

'गूँजते खण्डहर' में पूर्व-जन्म के साहित्यकार आकाश और बाद के जन्म के डाक्टर सुधीर दोनों का ही चरित्र पाठकों के लिए अनुकरणीय है जिसमें प्रेम तो है किन्तु स्वार्थ सन्निहित नहीं है। नायक अपने दोनों ही जन्मों में नायिका से मर्यादा की सीमा में रह कर ही प्रेम करता है। उपन्यास की दोनों नायिकाओं ने भी अपनी चारित्रिक मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं किया है। यद्यपि गंगा वृक्ष के मजबूत तने से लिपटी लतिका की भांति समर्पित जीवन जीने के सुन्दर स्वपन संजोये रहती है किन्तु प्रत्यक्ष में नायक से कुछ नहीं कहती। सम्पूर्ण उपन्यास में आज-कल के साहित्य एवं फिल्म-जगत में व्याप्त प्रेम-प्रदर्शन का भौंडापन कहीं नहीं दिखता।

नायक-नायिका दिल्ली, आगरा, फतेहपुर सीकरी, आदि कई स्थानों पर घूम आते हैं। होटल के एक ही कक्ष में रात्रि-विश्राम करते हैं किन्तु दोनों का साथ एक-दूजे का हाथ पकड़ कर चलने तक ही सीमित रहता है। लेखक ने आदर्शवादिता का अपने लेखन में विशेष ध्यान रखा है। उसने अपने पाठकों के लिए इस उपन्यास के माध्यम से कई सन्देश भी छोड़े हैं। सर्वप्रथम उसने इस तथ्य पर बल दिया है कि कोई कहानी अथवा फिल्म मात्र सैक्स-प्रदर्शन से ही रोचक नहीं बनती। कहानी को रोचक बनाने के अन्य बहुत से उपादान हैं जिनका लेखक ने खुलकर प्रयोग किया है। उपन्यास का कथानक विस्तृत न होते हुए भी लेखक ने गागर में सागर भर दिया है।

लेखक ने महात्मा गाँधी के मुख्य चारित्रिक गुण 'मानव मात्र की सेवा में सुख और संतोष की गहन अनुभूति' को कहानी के नायक डाक्टर सुधीर के चरित्र में समाविष्ट किया है। जहाँ उसके अन्य डाक्टर साथी शहर की भीड़-भाड़ में मोटर-कारों में दौड़ रहे हैं, वहीं डाक्टर सुधीर एक साधारण सी साइकिल पर ही अपने रोगियों को घर-घर जाकर देखता है। एक बार को उसके हृदय में भी सैर-सपाटे की इच्छा जागृत होती है तो वह भगवान राम से मन ही मन इच्छा प्रकट करते हुए कहता है, 'यार मेरे, कम से कम एक स्कूटर की व्यवस्था तो करा दे ताकि इन वादियों में लम्बी और सुहानी ड्राइविंग का आनंद ले सकूं।' इससे स्पष्ट होता है कि उसकी इच्छा स्कूटर पर आकर ही ठहर जाती है इससे ऊपर की बात वह सोचता ही नहीं।

कई स्थलों पर डाक्टर सुधीर को श्री राम का स्मरण करते देख, यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि लेखक स्वयं भी श्री राम का अनन्य भक्त है। कथाकार अपनी कहानी में कहीं न कहीं किसी पात्र के रूप में अवश्य ही विद्यमान रहता है। इस उपन्यास में भी लेखक स्वयं डाक्टर सुधीर के रूप में जी रहा है। लेखक ने अपने हृदय के सभी उदगारों को व्यक्त करने के लिए कहानी के नायक डाक्टर सुधीर का सहारा लिया है। उदाहरणार्थ, ढाबे वाले द्वारा पैसे न लेने पर डाक्टर सुधीर कहता है, ''नहीं बाबा, पैसा तो लेना पड़ेगा। मुफ्त में खाना हमारा धर्म नहीं है। कृपया, आप मुझे मेरे धर्म से परे मत कीजिये।

''क्या राजपूत हो?''

''ब्राह्मण कुमार हूँ बाबा।''

''लाइए, मैं ले लेता हूँ क्योंकि भटके हुए समाज को एक ब्राह्मण ही सही मार्ग दिखा सकता है और धर्म के

परे मैं तुम्हें हरगिज नहीं होने दूँगा। ये बूढ़ा भी एक ब्राह्मण है।''

इस प्रकार लेखक ने ब्राह्मण-समाज को भी उसके कर्तव्यों का बोध कराया है। अतएव हम यह कह सकते हैं कि 'गूँजते खण्डहर' पूर्व-जन्म की एक कहानी मात्र ही नहीं है अपितु, लेखक ने इसमें मानव-जीवन के विभिन्न पहलुओं पर भी प्रकाश डाला है। यह उपन्यास एक आदर्श गृहस्थ्य जीवन की कसौटी पर खरा उतरता है। कहानी में प्रत्येक पात्र के चरित्र को समुचित ढंग से दर्शाया गया है।

***

-निकट जनता इण्टर कालेज,
पंजाबी कालोनी, किच्छा,
जिला ऊधम सिंह नगर

जंग लगी खिड़की–आशा शैली

अक्सर घरों में होती है
मेरे घर में भी
न जाने कब से पड़ी थी बंद
एक खिड़की जंग लगी
जिसे खोलने का
मेरा कोई इरादा नहीं था
एक उम्र गुजर गई
वह खिड़की बंद थी
बंद ही रही
फिर पता नहीं क्या हुआ
कहाँ से आ गया वह
बनकर
तेज झोंका हवा का
कई दिन तक
खड़खड़ाता रहा उस जंग लगी खिड़की के
चरमराते पट
और आखिर हो ही गया कामयाब वह
खिड़की खोलने में
शायद
मैंने भी कोई कोशिश नहीं की उसे
बंद रखने के लिए
शायद
मैं भी चाहती थी
घुटन को कम करना
पर जब मैंने
खिड़की के खुले पट से बाहर झांका
तो
बाहर कोई नहीं था
दूर तक कोई नहीं
कोई नहीं
कोई भी नहीं।
मैंने प्रतीक्षा की
बहुत दिनों तक प्रतीक्षा की
और फिर मैंने थक कर
वह खिड़की कर दी है फिर से बंद
अनन्त काल के लिए

कार रोड, पो. लालकुआँ,
नैनीताल-262402, मो. 9456717150

उड़ते परिन्दे -प्रस्तुति-विनय 'सागर'

7520298865

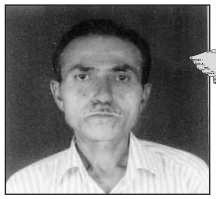

जो अब दरख़्त पे नहीं है उस एक पत्ते को
हवाएँ ढूँढ़ती रहती हैं पागलों की तरह
–मोबीन शम्सी 'बद्र' (बरेली)

शाइर हूँ मैं शरीक हूँ सबके मलाल में
तारीख़ मुझको याद करेगी मिसाल में
– अब्दुल सत्तार 'नदीम' (कोटा)

हमेशा बनाने की करते जो कोशिश
मुक़द्दर को अपने वो रोते नहीं हैं
–डॉ. कैलाश निगम (लखनऊ)

जुर्म की पीठ थपथपाती है
तब सियासत सुकून पाती है
–द्विजेंद्र द्विज (हिमाचल)

मुझको छूना है आकाश ज़िद है मेरी
बिन परों के मेरा हौसला दखिए
–सागर सूद (पटियाला)

घर से बाहर निकलना कठिन हो गया
दुश्मन अपनी ही जवानी हुई
–कीर्ति श्रीवास्तव (भोपाल)

अपना किरदार संवारो तो संवर जाओगे
वरना दुनिया की निगाहों से उतर जाओगे
–रंजन 'आज़र' (आज़मगढ़)

हक़ीक़त से वो शायद आशना है
बुजुर्गों की जो इज़्ज़त कर रहा है
–डॉ. नईम 'साहिल' (इलाहाबाद)

क्या पता उनको कि तन्हा पेड़ पर गुज़रेगी क्या
बस परिन्दों की तरह आते हैं उड़ जाते हैं लोग
–आशा शैली

पुरखों ने लहू देके गुलशन को संवारा है
हम भी तो ज़रा सोचें, क्या फ़र्ज़ हमारा है
–विनय सागर, बरेली

846-शाहबाद, गोंदनी चौक,
बरेली (उ.प्र.)

एमिली डिकिंसन की कविताएँ

अनुवादक–डॉ.रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक'

मेरी नदी–

जन्म 10 .10, 1830
मृत्यु 15 मई, 1886

मेरी नदी भागती है,
जिसकी ओर।
उसका कोई,
ओर न छोर।
वह कोई नहीं है और,
नीला सागर है घनघोर।
जो स्वागत करता है मेरा,
होकर कितना भावविभोर।
करती हूँ मैं
उसके उत्तर की प्रतीक्षा।
जो विनयपूर्वक,
माँगता है पानी की भिक्षा।
मैं थामती हूँ,
उसका दामन।
और कहती हूँ–
ले लो मुझे,
अपने आगोश में।

***

धीरे से

धीरे से आओ
मेरे हैं अनछुए ओंठ
तुम छू लो धीरे से आकर!
जैसे मधुमक्खी
हो जाती है मदहोश
चमेली की सुगन्ध को पाकर!!
घूमती उसके चारों ओर!
खिंची आती है वो बिन डोर!!
कुछ विलम्ब ही सही
पहुँच जाती प्रसून के पास!
करा देती अपना आभास!!
रिझाती उसको कर गुंजार!
प्रकट कर देती सच्चा प्यार!!
शहद का करती है आकलन
और सुध–बुध खो देती है!
मधुर चुम्बन ले लेती है!!

***

मैंने पकड़ा आभूषण

मैंने
अपनी अंगुलियों में
पकड़ा
एक आभूषण
और इसको लेकर
मैं चली गई
अपने शयनकक्ष में
सोने के लिए
दिन गर्म था
हवा मंद थी
निद्रा में
मैंने कहा
इस गहने को
मैं रखूँगी
सदैव अपने पास
तभी मैं
जग गई अनायास
मैंने देखा
गहने से
मणि की चमक
जा चुकी थी
अब मैंने डाँटा
अपनी ईमानदार
अंगुलियों को
जिनमें था
नीलम का स्मरण
''मैंने पकड़ा आभूषण''

***

ऐमिली डिकिंसन की कविताएँ देखकर मुझे एक बार फिर प्रभात मिश्रा की स्मृति हो आई। प्रभात की पुस्तक क्षणिका का मैंने ओड़िया से हिन्दी में काव्यानुवाद किया था। जिन दिनों मैं उसकी पुस्तक का अनुवाद कर रही थी तब उसने कहा था, ''माँ! इसके बाद हम ऐमिली डिकिंसन का अनुवाद करेंगे। मैं अनुमति ले चुका हूँ, परन्तु वह अपनी इस इच्छा को पूर्ण नहीं कर पाया। अनुवाद पूर्ण होने से पहले ही उसने आत्महत्या कर ली।

आज प्रभात नहीं है और डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक' जी ने जब मुझे बहुत-सा अनुवाद कार्य भेजा तो मुझे सहसा प्रभात की याद हो आई। उन सभी अनुवादों में से मैंने सबसे पहले ऐमिली डिकिंसन की कविताएँ चुनीं। मुझे सहज आभास हुआ कि मैं अपने उस मुँह बोले पुत्र को श्रद्धांजलि दे रही हूँ। इस पुनीत कार्य के लिए मैं डॉ. 'मयंक' की हृदय से आभारी हूँ। धन्यवाद डॉ. 'मयंक'

–आशा शैली

और पिता जी चिरनिद्रा में लीन हो गये...डॉ.रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक'

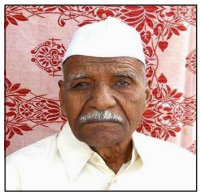

पन्द्रह अगस्त, 2012 को पिता जी दिन में 3 बजे अपराह्न घर के आँगन में फिसलकर गिर पड़े थे। चोट तो उनको नहीं लगी थी मगर 89 साल की उमर में उनके मन में यह डर बैठ गया था कि खड़ा होकर चलूँगा तो गिर जाऊँगा और उन्होंने खड़े होकर चलना बन्द ही कर दिया था। 2 फरवरी 2014 तक वो घुटनों के बल पर खिसक–खिसक कर चलते थे।

अपने इसी डर के कारण वे ग्राउण्ड–फ्लोर पर रहते थे जबकि मेरा आवास प्रथम मंजिल पर है। मन में यह सन्तोष था कि पिता जी अपने दैनिक कार्य स्वयं कर रहे हैं। लेकिन 2 फरवरी को प्रातः 11 बजे वे गर्म पानी से स्नान करने प्रथम तल पर आये और अपने दैनिक कार्य सम्पन्न करके भोजन किया। तब तक मैं अपने चिकित्सालय में आ गया था। अचानक मुझे सीढ़ियों पर से उनके गिरने की आवाज आयी। मैं दौड़कर सीढ़ियों तक गया तो पिता जी सीढ़ियों के मध्य में बने बड़े स्टैपर पर अचेत पड़े थे। मैंने उन्हें हिलाया–डुलाया और पानी के छींटे उनके चेहरे पर दिये तो उनको होश आ गया। कहने लगे कि मुझे कुछ नहीं हुआ है।

लेकिन वे अपने पाँव बिलकुल हिला जुला नहीं पा रहे थे। किसी तरह उनको मैंने गोद में उठाकर बिस्तर पर लिटा दिया। अब पिता जी को दर्द का काफी आभास हो रहा था। डॉक्टर को दिखाया तो उसने कहा कि इनकी आयु बहुत ज्यादा हो चुकी है। पैरों से तो पहले भी नहीं चल पाते थे अब दवा और इलाज से थोड़े दिन में ठीक हो जायेंगे। अन्ततः एक सप्ताह में पिता जी का चोट का दर्द ठीक हो गया। वे लगभग सामान्य हो गये लेकिन अब वे घुटनों के बल पर भी चल नहीं पाते थे।

दिन–प्रतिदिन उनका स्वास्थ्य गिरता जा रहा था। बिस्तर प्रतिदिन ही गन्दा हो जाता था। मैं पिता जी का एक मात्र पुत्र था इसलिए मैं उनका बिस्तर और कपड़े स्वयं ही धोता था, परिवार के किसी व्यक्ति को इस काम में मैं हाथ भी लगाने नहीं देता था।

उस दिन 17 जुलाई, 2014 दिन बृहस्पतिवार था। शाम को 7–30 पर पिता जी को दूध में रस गलाकर चम्मच से खिलाया। उन्होंने बहुत चाव से खाया और थोड़ी देर बाद ही कहने लगे कि मुझे करण्ट जैसा लग रहा है। फिर हँस–हँस कर अपने जन्मस्थान नजीबाबाद की बहुत सारी बातें करने लगे। मुझे भी पहचान नहीं पा रहे थे। यानि वर्तमान स्मृति लगभग खत्म ही हो गयी थी। अब तो मेरी श्रीमती जी का और मेरा साहस जवाब दे चुका था। आशंका हो गयी थी कि पिता जी का शायद यह अन्त समय है। इसलिए सभी रिश्तेदारों को फोन कर दिये और पिता जी की हालत बता दी। बारह दिनों तक पिता जी बिल्कुल ठीक रहे। अट्ठाइस जुलाई, 2014 सोमवार का दिन था। शाम को 7–45 पर मैं फिर दूध व रस उनको चम्मच से खिलाने गया तो कहने लगे कि मुझे भूख नहीं है मगर मैंने उनको एक कटोरा दूध में भीगे रस खिला दिये।

29 जुलाई की सबह 5 बजे के लगभग मुझे स्वप्न आया कि पिता जी मुझे बुला रहे हैं। हड़बड़ाकर मैं उठकर पिता जी के पास गया देखा कि वह प्रसन्नमुद्रा में सो रहे हैं इसलिए मैंने उन्हें जगाना उचित नहीं समझा और लौटकर वापिस जाने लगा। तभी मन में विचार आया कि पिता जी को एक बार जगाकर तो देखूँ। जैसे ही मैंने पिता जी का हाथ छुआ तो मुझे वो ठण्डा महसूस हुआ। फिर उनके हाथ–पैर मोड़कर देखे तो सारे जोड़ मुड़ रहे थे। शरीर बिल्कुल नही अकड़ा था मगर पिता जी संसार छोड़कर चिर निद्रा में लीन हो चुके थे। सुबह 5–30 तक सब रिश्तेदारों को फोन कर दिये और शाम 4 बजे तक दूर–दूर के और पास के भी सभी रिश्तेदार आ चुके थे। यानि अन्तिम दर्शन सबको मिल गये थे।